BGS
भारतीय ज्ञान समाधान
शाश्वत ज्ञान, अनंत संभावनाएँ

मासिक पत्रिका
तृतीय अंक | अक्टूबर 2026
अंक तिथि: 31.10.2026
RNI-CTBIL/26/A5037

आवरण कथा

मस्क बनाम अंबानी:

स्टारलिंक की असली अड़चन क्या है?



पृष्ठ 13–14
सूचना की बाढ़,
ज्ञान का सूखा

पृष्ठ 10–12
जनजातीय पहचान:
संविधान और सांस्कृतिक विरासत

पृष्ठ 20–22
बस्तर का जंगल:
परंपरा में जीवित ज्ञान

₹20/-


संस्कृति विभाग, छत्तीसगढ़ शासन
Chhattisgarh Tourism
छत्तीसगढ़
राज्योत्सव
2024
दिनांक - 4 नवंबर से 6 नवंबर 2024
स्थान -
राज्योत्सव मेला स्थल, नया रायपुर
आप सभी सादर
आमंत्रित हैं

अनुक्रमणिका

04 | संपादकीय
बदलते समय में ज्ञान, विवेक और भारत की दिशा

05–09 | आवरण कथा
मस्क बनाम अंबानी:
स्टारलिंक की असली अड़चन क्या है?



10–12 | समाज एवं संविधान
जनजातीय पहचान केवल प्रमाणपत्र नहीं,
संविधान से जुड़ी सामाजिक-सांस्कृतिक विरासत

13–14 | ज्ञान एवं डिजिटल जीवन
सूचना की बाढ़, ज्ञान का सूखा

15–16 | भारतीय ज्ञान एवं संस्कृति
शरद पूर्णिमा की चांदनी में
पुरखों का प्रकृति ज्ञान



17–19 | बस्तर विशेष
बस्तर दशहरा और मुरिया दरबार

20–22 | बस्तर विशेष
जंगल, जो कभी किताब नहीं बना
बस्तर में ज्ञान पढ़ा नहीं जाता, जिया जाता है

23–24 पर्यावरण | जल संरक्षण
जहाँ बादल खूब बरसते हैं,
वहाँ प्यास क्यों रहती है?

25–26 ऊर्जा | सौर सहयोग
सूरज से रिश्ता: सौर ऊर्जा में
भारत की भूमिका और जिम्मेदारी



27 | सदस्यता एवं पाठक संपर्क
साझा मंच, साझा जिम्मेदारी

28 | अंतिम आवरण

डॉ. अनुज कुमार नारद
संपादक

सदस्यता एवं पाठक संपर्क
सदस्यता व संस्थागत प्रतियों के लिए संपर्क करें।
9111511188
www.bhartiyagyansamadhan.in
info@bhartiyagyansamadhan.in
विस्तृत जानकारी — पृष्ठ 27

सदस्यता फॉर्म के लिए स्कैन करें

प्रकाशन विवरण
भारतीय ज्ञान समाधान • तृतीय अंक • अक्टूबर 2026
मासिक • हिन्दी एवं अंग्रेजी • मूल्य ₹20/-
ऑनलाइन उपलब्ध: 2 नवंबर 2026
प्रकाशक एवं संपादक: डॉ. अनुज कुमार नारद
स्वामी: Association of Multi Skilled Professionals
Bhilai, Durg, Chhattisgarh–490023
प्रकाशन कार्यालय: 11/A, Street 36, Sector 5,
Bhilai Nagar, Durg, Chhattisgarh–490006

मुद्रक: Vikas Shrivastava
मुद्रणालय: Vikash Press, 208 Akashganga,
Supela, District Durg, Chhattisgarh–490023

PRGI पंजीयन: RNI-CTBIL/26/A5037
9111511188
info@bhartiyagyansamadhan.in
bhartiyagyansamadhan.in
सदस्यता एवं पाठक संपर्क — पृष्ठ 27

संपादकीय

बदलते समय में ज्ञान, विवेक और भारत की दिशा

यह अंक हमारे समय के एक जरूरी प्रश्न के साथ आपके सामने है—सूचना के इतने साधनों के बीच हम समझ, विवेक और अपने अनुभव के लिए कितनी जगह बचा पा रहे हैं? तकनीक की गति तेज है, लेकिन उसके उपयोग और प्रभाव पर विचार करना हमारी जिम्मेदारी है। स्टारलिंक पर आवरण कथा इसी संवाद को आगे बढ़ाती है। सैटेलाइट इंटरनेट की चर्चा केवल उद्योगपतियों की प्रतिस्पर्धा तक सीमित नहीं है; इसके साथ दूरदराज तक संपर्क, सेवा की उपलब्धता और सार्वजनिक हित के प्रश्न भी जुड़े हैं।

ज्ञान का दूसरा संसार उन समुदायों के बीच है जिन्होंने अपनी समझ को जीवन में सँजोया है। बस्तर के जंगल पर लेख हमें प्रकृति से लेने के साथ उसे बचाए रखने की जिम्मेदारी याद दिलाता है। जनजातीय पहचान पर अतिथि लेख सामाजिक-सांस्कृतिक विरासत और संवैधानिक संरक्षण के संबंध पर विचार का अवसर देता है। किसी जटिल प्रश्न को केवल एक प्रमाणपत्र या एक समाचार शीर्षक में समेट देना पर्याप्त नहीं होता।

‘सूचना की बाढ़, ज्ञान का सूखा’ हमारे रोजमर्रा के डिजिटल जीवन से जुड़ा लेख है। लगातार नई सामग्री देखना और किसी बात को ठहरकर समझना अलग अनुभव हैं। पढ़ना, सुनना, अपने शब्दों में कहना और किसी बात को जीवन से जोड़ना—ये आदतें आज भी मूल्यवान हैं। तकनीक का उपयोग करते हुए एकाग्रता और संवाद के लिए समय बचाना हमारी अपनी पसंद भी हो सकती है।

शरद पूर्णिमा पर लेख परंपरा में बसे प्रकृति-बोध की ओर लौटता है। बस्तर दशहरा पर लेख लोकभागीदारी और कारीगरों के कौशल को सामने लाता है। सौर ऊर्जा पर आलेख भारत की भूमिका और जिम्मेदारी की चर्चा करता है, जबकि जल संरक्षण पर लेख बारिश और पानी की उपलब्धता के बीच स्थानीय समझ की भूमिका समझाता है। छत्तीसगढ़ के तरिया, गाँव के अनुभव और समुदाय की भागीदारी इस चर्चा को हमारे अपने परिवेश से जोड़ते हैं।

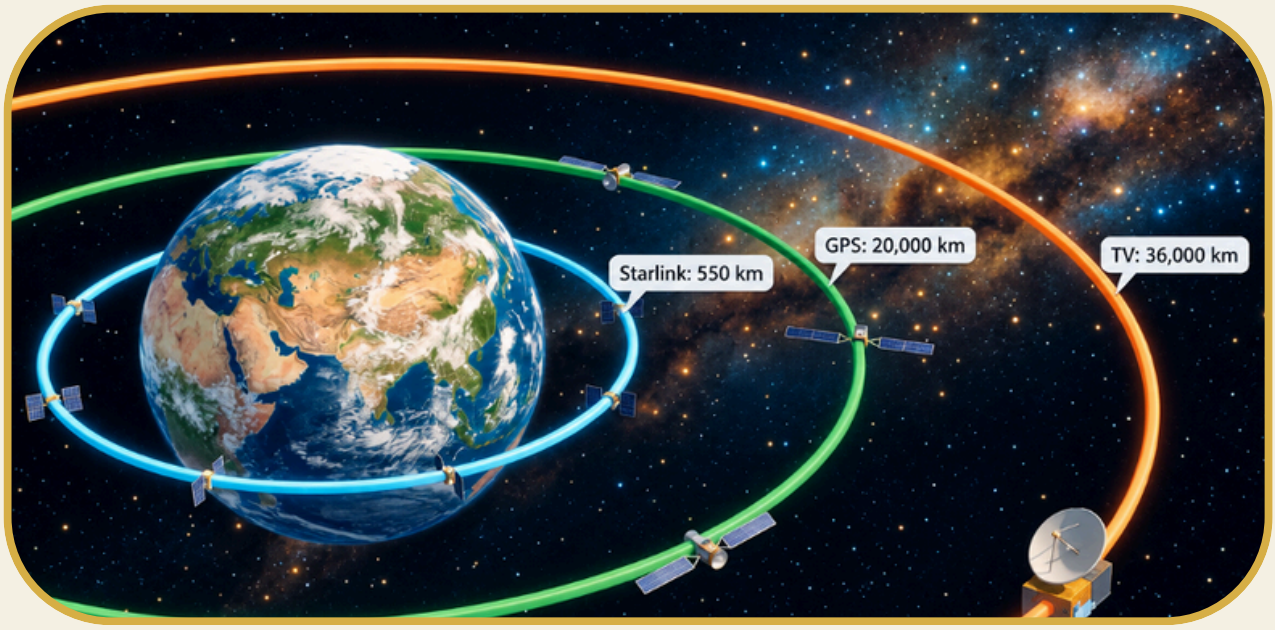
‘भारतीय ज्ञान समाधान’ के तृतीय अंक में हमारा प्रयास अलग-अलग विषयों को पाठक के जीवन से जोड़ना है। आपकी प्रतिक्रिया इस यात्रा का आवश्यक हिस्सा है। अपनी टिप्पणी, स्थानीय अनुभव और लेख हमें भेजें, ताकि आने वाले अंकों में समाज के अपने प्रश्न और अपने समाधान अधिक स्पष्ट रूप से सामने आ सकें।



डॉ. अनुज कुमार नारद
संपादक, भारतीय ज्ञान समाधान

मस्क बनाम अंबानी: स्टारलिंक की असली अड़चन क्या है?

एक ट्वीट, दो अरबपति, एक सरकार और पाँच दरवाजों की कहानी



पृथ्वी के चारों ओर उपग्रहों की कक्षाएँ: स्टारलिंक (550 किमी), जीपीएस (20,000 किमी), टीवी (36,000 किमी)

एक ट्वीट, और बहस शुरू

7 अक्टूबर 2026 की रात दुनिया के सबसे अमीर व्यक्ति ईलॉन मस्क ने एक्स (पूर्व ट्विटर) पर एक पोस्ट के जवाब में लिखा कि उनकी कंपनी स्टारलिंक को भारत में कुछ "ओलिगार्क" रोक रहे हैं और यह भारत के लोगों के विरुद्ध अपराध है। उन्होंने किसी का नाम नहीं लिया, बस इशारा किया कि अंदाजा आप खुद लगा लें। अगले दिन 8 अक्टूबर को भारत सरकार ने भी बिना नाम लिए इस आरोप को निराधार बताया। कुछ ही घंटों में मस्क ने सीधा सवाल दाग दिया: क्या अंबानी ही भारत के असली बॉस हैं?

सोशल मीडिया पर कहानी तुरंत गढ़ ली गई: खलनायक अंबानी, पीड़ित मस्क। लेकिन तथ्य इतने सीधे नहीं हैं। जिस जियो को मस्क स्टारलिंक का सबसे बड़ा रोड़ा बता रहे हैं, उसी के साथ स्टारलिंक मार्च 2025 में भारत में अपने उपकरण बेचने का आधिकारिक समझौता कर चुकी है। यह लेख इसी उलझन को सुलझाने की कोशिश है: कौन क्या चाहता है, कौन-सी मंजूरी कब मिली, अटका क्या है और क्यों।

पैमाने का फर्क

पहली नजर में लगता है कि दो बराबर के पहलवान भिड़ रहे हैं, पर दोनों की हैसियत में जमीन-आसमान का अंतर है। मस्क की संपत्ति अनुमानतः लगभग 1 ट्रिलियन डॉलर बताई जा रही है, जबकि मुकेश अंबानी की संपत्ति इसके मुकाबले कई गुना कम है। आसमान में भी यही तस्वीर है: दुनिया में काम कर रहे लगभग 17,000 उपग्रहों में से 11,000 से अधिक अकेले स्टारलिंक के हैं, यानी हर तीन में से दो।

इस विवाद के दिन रिलायंस के शेयरों में भारी गिरावट भी दर्ज हुई। ध्यान रहे कि जिस दिन आपके पास दांव पर लगा पैसा सबसे ज्यादा हो, उस दिन की सुर्खियाँ भी सबसे तेज होती हैं।

स्टारलिंक आखिर है क्या?

उपग्रह क्या है। जो भी पिंड किसी बड़े पिंड के चारों ओर घूमता है, वह उपग्रह है। चाँद प्राकृतिक उपग्रह है, और इंसान द्वारा रॉकेट से भेजे गए उपग्रह मानव-निर्मित।

कहाँ-कहाँ घूमते हैं। जमीन से लगभग 12 किमी तक की परत ट्रोपोस्फीयर है, जहाँ बादल और बारिश होती है। यात्री विमान 10-12 किमी पर उड़ते हैं। लगभग 100 किमी के बाद अंतरिक्ष शुरू होता है। स्टारलिंक के उपग्रह लगभग 550 किमी पर हैं (इसे लो अर्थ ऑर्बिट कहते हैं), जीपीएस वाले करीब 20,000 किमी पर और टीवी वाले करीब 36,000 किमी पर।

गिरते क्यों नहीं। उत्तर है गति। उपग्रह इतनी तेजी से आगे बढ़ते हैं कि वे गिरते-गिरते पृथ्वी की गोलाई के साथ घूमते रहते हैं। स्टारलिंक का उपग्रह लगभग 95 मिनट में पृथ्वी का एक चक्कर पूरा कर लेता है।



550 किमी की ऊँचाई यानी दिल्ली से लखनऊ जितनी दूरी, पर सीधी ऊपर की ओर

पास होने का फायदा। 36,000 किमी वाले टीवी उपग्रह से सिग्नल आने-जाने में लगभग आधा सेकंड लगता है, जबकि 550 किमी वाले स्टारलिंक से कुछ दहाई मिलीसेकंड। इसीलिए इसका अनुभव सामान्य ब्रॉडबैंड जैसा होता है। 550 किमी की ऊँचाई का अंदाजा ऐसे लगाइए कि यह दिल्ली से लखनऊ की दूरी के बराबर है, बस सीधी ऊपर की ओर। इतने नीचे से एक उपग्रह जमीन का छोटा हिस्सा ही देख पाता है, इसलिए पूरी दुनिया को ढकने के लिए हजारों उपग्रह चाहिए।

कैसे काम करता है। स्पेसएक्स के रॉकेट एक बार में दर्जनों उपग्रह कक्षा में छोड़ते हैं। घर की छत पर लगी छोटी डिश ऊपर से गुजरते उपग्रह को पकड़ती है और जैसे ही वह निकलता है, अगले को पकड़ लेती है। उपयोगकर्ता का डेटा उपग्रह से होकर जमीन पर बने गेटवे तक जाता है, जो फाइबर नेटवर्क से जुड़ा बड़ा एंटीना-केंद्र होता है। भारत की शर्त है कि यह गेटवे देश के भीतर हो, ताकि डेटा यहीं रहे और जरूरत पड़ने पर सुरक्षा एजेंसियाँ निगरानी कर सकें।

आसमान में बढ़ती भीड़

इतनी निचली कक्षा में इतने उपग्रह होने से आसमान में भीड़ बढ़ती है। उपग्रहों को आपस में टकराव से बचने के लिए बार-बार अपनी राह बदलनी पड़ती है, और हर रोज कुछ उपग्रह अपना जीवन पूरा कर वायुमंडल में जलकर नष्ट हो जाते हैं। भविष्य में अगर कंपनियों के उपग्रहों की संख्या कई गुना बढ़ी, तो कक्षा और भी भीड़भरी हो सकती है। यह चित्र इसी आशंका का प्रतीकात्मक चित्रण है।



प्रतीकात्मक, एआई-निर्मित): निचली कक्षा में उपग्रहों की भीड़ का काल्पनिक दृश्य

कीमत और रफ्तार

रिपोर्टों के अनुसार भारत में स्टारलिंक की मासिक कीमत लगभग ₹3,000 और डिश के उपकरण का खर्च लगभग ₹33,000 रहने का अनुमान है, जबकि जियो के औसत उपभोक्ता का मासिक भुगतान ₹215 के आसपास है। सरकारी सीमा के अनुसार गति अधिकतम लगभग 200 Mbps तक रहेगी, यानी लगभग उतनी ही जितनी शहरों में 5G या फाइबर पर मिल जाती है।

तो फायदा कहाँ है? वहाँ जहाँ टावर और तार नहीं पहुँच सकते: पहाड़, जंगल, समुद्र, और बाढ़ या आपदा के समय जब जमीनी नेटवर्क ध्वस्त हो जाए।

असली चिंता: "स्विच" किसके हाथ में?

भारत सरकार की हिचक का केंद्र कीमत या प्रतिस्पर्धा से ज्यादा सुरक्षा है। इसके पीछे कई घटनाएँ गिनाई जाती हैं:

• **मणिपुर (दिसंबर 2024):** सेना को उग्रवादियों के ठिकाने से हथियारों के साथ एक डिश मिली जिस पर स्टारलिंक का लोगो था। मस्क ने तब कहा था कि भारत के ऊपर स्टारलिंक के बीम बंद हैं। डिश वहाँ सक्रिय थी या नहीं, यह आज तक साफ नहीं हुआ, और सवाल यह भी है कि वह वहाँ पहुँची कैसे।

• **अंडमान (नवंबर 2024):** एक नाव से भारी मात्रा में नशीले पदार्थ पकड़े गए, जिस पर स्टारलिंक डिवाइस लगा बताया गया।

• **ईरान:** वहाँ की सरकार द्वारा इंटरनेट बंद किए जाने के दौरान स्टारलिंक चालू किए जाने की रिपोर्टें आईं, यानी किसी देश की सरकार की सहमति के बिना भी उसके आसमान से इंटरनेट चल सकता है।

• **यूक्रेन (सितंबर 2022):** रिपोर्टों के अनुसार क्रीमिया के पास एक अभियान के समय स्टारलिंक चालू करने के अनुरोध को मस्क ने ठुकरा दिया। 2023 में स्पेसएक्स ने स्वीकार किया कि उसने युद्ध के दौरान यूक्रेनी सेना के लिए सेवा पर सीमाएँ लगाईं। बाद में यह सेवा अमेरिकी सरकार के अनुबंध के तहत चलने की बात कही गई।

• **स्टारशील्ड:** स्पेसएक्स की एक शाखा अमेरिकी सरकार के लिए काम करती है। रॉयटर्स की रिपोर्ट के अनुसार 2021 में उसने अमेरिका की राष्ट्रीय टोही एजेंसी (NRO) के साथ लगभग 1.8 अरब डॉलर का गोपनीय अनुबंध किया था, जिसमें निगरानी उपग्रहों का नेटवर्क बनाना शामिल बताया गया।

इन सबसे भारत का तर्क बनता है: जो कंपनी युद्ध के समय किसी बड़ी शक्ति के कहने पर सेवा चालू-बंद कर सकती है, उस पर देश की संचार-व्यवस्था का कितना भरोसा किया जाए? इसीलिए सरकार ने स्टारलिंक जैसी कंपनियों के सामने लगभग 29 शर्तें रखी हैं, जिनमें प्रमुख यह है कि आपातकाल या युद्ध में सरकार किसी भी क्षेत्र की सेवा बंद करा सके। साथ ही गेटवे और डेटा भारत में रहने की शर्त है।

मस्क का दावा	**स्थिति**
स्टारलिंक 165 से अधिक देशों में लाइसेंस प्राप्त है	सही
पाँच साल से भारत के हर कानून का पालन कर रही है	काफ़ी हद तक सही। 2021 में बुकिंग शुरू हुई थी, 5,000 से अधिक लोगों ने पैसे दिए थे, पर लाइसेंस न होने के कारण सरकार ने रकम वापस करवा दी थी।
भारत में लाइसेंस नहीं दिया जा रहा	**ग़लत।** दूरसंचार विभाग का लाइसेंस जून 2025 में ही मिल चुका है

अटका क्या है? सरकार के 8 अक्टूबर के बयान के अनुसार लाइसेंस तीन कंपनियों के पास है: स्टारलिंक, जियो-एसईएस और एयरटेल समर्थित वनवेब। तीनों एक ही मंच पर खड़ी हैं और किसी एक को अलग से रोकने की बात निराधार है। असल बाधा लाइसेंस के बाद की मंजूरियाँ हैं, जिनका ब्योरा अगले खंड में है।

मंजूरियों का क्रम: कब, किसे, क्या मिला

रेस्टोरेंट का उदाहरण लें: लाइसेंस मिल जाने का मतलब यह नहीं कि दुकान खुल गई। उसके बाद फायर विभाग की जाँच, बिजली का मीटर और बाकी औपचारिकताएँ बचती हैं। भारत में सैटेलाइट इंटरनेट शुरू करने के लिए भी पाँच बड़े पड़ाव हैं।

इस तालिका का निचोड़:

• यह कोई ताजा या अचानक खड़ा हुआ मामला नहीं है। पहले दो पड़ाव स्टारलिंक एक साल से ज्यादा पहले पार कर चुकी है।
• गृह मंत्रालय की सुरक्षा मंजूरी पर तीनों कंपनियाँ इंतजार में हैं। रिपोर्ट के अनुसार जून 2026 में स्टारलिंक की अंतिम मंजूरी पर रोक की खबर आई, जो स्पेसएक्स की शेयर बाजार में लिस्टिंग से कुछ दिन पहले की बात थी। ईरान और मणिपुर वाली घटनाएँ चूँकि स्टारलिंक से जुड़ी थीं, इसलिए उसकी जाँच अधिक कड़ी मानी जाती है।
• सरकारी अधिकारी मई 2026 से स्टारलिंक के स्वामित्व ढाँचे पर सवाल उठा रहे हैं, यानी कंपनी के पीछे असली मालिक कौन हैं। मजेदार विडंबना है कि जो पूछ रहा है "असली बॉस कौन", उससे सरकार भी वही सवाल पूछ रही है।

स्पेक्ट्रम की लड़ाई: जहाँ से तकरार शुरू हुई

स्पेक्ट्रम यानी हवा में सिग्नल चलाने के रास्ते, जैसे हाईवे की लेन। ये सरकार की संपत्ति हैं। जियो और एयरटेल जैसी कंपनियाँ इन्हें नीलामी में खरीदती हैं और इसमें लाखों करोड़ रुपये लगते हैं। सिर्फ 2022 की एक नीलामी में जियो ने लगभग ₹88,000 करोड़ दिए।
मस्क और दुनिया की सैटेलाइट कंपनियों का तर्क है कि उपग्रह किसी एक देश में टिके नहीं रहते, इसलिए सैटेलाइट स्पेक्ट्रम अंतरराष्ट्रीय स्तर पर साझा होता है और कोई देश उसकी नीलामी नहीं करता। जियो का कहना था कि या तो सैटेलाइट कंपनियाँ भी नीलामी में आएँ या मैदान बराबर नहीं है।
जियो ने 2024 में सरकार को तीन पत्र लिखे। एयरटेल के सुनील मित्तल ने भी सार्वजनिक रूप से यही माँग रखी।
फैसला क्या हुआ? 15 अक्टूबर 2024 को इंडिया मोबाइल कांग्रेस के दौरान दूरसंचार मंत्री ज्योतिरादित्य सिंधिया ने घोषणा की कि सैटेलाइट स्पेक्ट्रम की नीलामी नहीं होगी, उसे प्रशासनिक रूप से दिया जाएगा। यानी फैसला मस्क के पक्ष में गया और जियो की माँग के विरुद्ध। मस्क ने तब आभार जताया

क्रम	मंज़ूरी	जारी करने वाली संस्था	स्टारलिंक	जियो-एसईएस	एयरटेल-वनवेब
1	ग्लोबल मोबाइल पर्सनल कम्यूनिकेशन बाय सैटेलाइट (GMPCS)	दूरसंचार विभाग	मिल चुका (जून 2025)	मिल चुका*	मिल चुका*
2	अंतरिक्ष गतिविधि की अनुमति	इन-स्पेस (IN-SPACe)	मिल चुकी (जुलाई 2025)	मिल चुकी*	मिल चुकी*
3	सुरक्षा मंज़ूरी	गृह मंत्रालय	**लंबित**	**लंबित**	**लंबित**
4	स्पेक्ट्रम का आवंटन और कीमत	दूरसंचार विभाग और ट्राई	केवल परीक्षण के लिए थोड़ा स्पेक्ट्रम मिला; अंतिम आवंटन बाकी	बाकी	बाकी
5	विदेशी निवेश (FDI) की मंज़ूरी	सरकार	लंबित; स्वामित्व ढाँचे पर सवाल	बाकी	बाकी

था। मई 2025 में ट्राई ने सुझाव दिया कि सैटेलाइट कंपनियाँ कमाई का लगभग 4 प्रतिशत देंगी (शहरी उपभोक्ताओं पर प्रति वर्ष ₹500 का अतिरिक्त शुल्क भी प्रस्तावित हुआ)। अंतिम साइन अभी बाकी है। इसलिए "अंबानी ने मस्क को रोका" वाली कहानी स्पेक्ट्रम के मामले में टिकती नहीं: वह लड़ाई मस्क दो साल पहले ही जीत चुके हैं।
स्रोत-संदर्भ: दूरसंचार मंत्रालय, 8 अक्टूबर 2026; TRAI, मई 2025।

दुनिया में स्टारलिंक के साथ क्या हुआ

• ब्राजील (2024): मस्क की दूसरी कंपनी एक्स पर जुर्माने के विवाद में सुप्रीम कोर्ट ने स्टारलिंक के खाते फ्रीज कर दिए। जब नियामक ने ग्राउंड स्टेशनों का सामान जब्त करने की चेतावनी दी तो कुछ ही दिनों में स्टारलिंक ने एक्स को ब्लॉक कर दिया। सबक: गेटवे वह गला है जिसे सरकार जरूरत पड़ने पर पकड़ सकती है। भारत की गेटवे वाली शर्त का मर्म यही है।

• दक्षिण अफ्रीका: वहाँ दूरसंचार कंपनियों में 30 प्रतिशत हिस्सेदारी ऐतिहासिक रूप से वंचित समुदायों के लिए रखने का नियम है। मस्क ने इसे नस्लवादी कहा और हिस्सेदारी देने से इनकार किया। नतीजतन मस्क के जन्म-देश में स्टारलिंक अभी तक शुरू नहीं हुआ।

• अन्य: नामीबिया ने मार्च 2026 में स्टारलिंक का लाइसेंस आवेदन खारिज किया। पाकिस्तान में आवेदन 2022 से सुरक्षा मंजूरी के इंतजार में है। चीन, रूस, ईरान और उत्तर कोरिया ने सेवा पर प्रतिबंध लगा रखा है, हालाँकि रिपोर्टें बताती हैं कि यूक्रेन के युद्ध में रूसी सैनिक चोरी की डिशें इस्तेमाल कर रहे थे।

सार यह है कि जहाँ सरकारें अपनी शर्तों पर डटी रहीं, वहाँ स्टारलिंक को झुकना पड़ा।

मस्क को जल्दी अभी ही क्यों?

जवाब तीन तारीखों में दिखता है:

- **जून 2026:** स्पेसएक्स शेयर बाजार में सूचीबद्ध हुई। अब हर तिमाही निवेशकों को बताना होता है कि कमाई कहाँ से बढ़ेगी। भारत में एक अरब से अधिक इंटरनेट उपयोगकर्ता हैं, यानी चीन के बाद दुनिया का सबसे बड़ा बाजार। स्टारलिंक भारत में पहले ही निवेश कर चुकी है, लगभग 20 गेटवे तैयार बताए जाते हैं, पर कमाई अभी शून्य है।

- **अक्टूबर 2026:** इंडिया मोबाइल कांग्रेस के सप्ताह में, जब पूरा टेलीकॉम उद्योग दिल्ली में एक छत के नीचे था, स्टारलिंक की एक वरिष्ठ अधिकारी मंच से भारत की सेवा के लिए तैयार होने की बात कह रही थीं, और उसी दिन मस्क का ट्वीट आया।

- **अक्टूबर 2026:** रिपोर्टों के अनुसार इसी दिन जियो का आईपीओ खुलने वाला था, जो भारत का अब तक का सबसे बड़ा था । इससे ठीक पहले रिलायंस के बाजार मूल्य में भारी गिरावट आई।

इसे संयोग कहें या दबाव की रणनीति, यह पाठक तय करें। एक और पहलू: रिपोर्टों में कहा जाता है कि भारत-अमेरिका व्यापार वार्ता में भी स्टारलिंक की मंजूरी एक मोलभाव का मुद्दा बनी हुई है। 10 अक्टूबर को मस्क ने यह भी लिखा कि स्टारलिंक भारत में महँगी रही तो कोई खरीदेगा नहीं, इसलिए स्पेसएक्स को दाम घटाने पड़ेंगे। यानी तीन दिन में आरोप भी, और विक्रेता की भूमिका भी।

क्या स्टारलिंक से गाँवों की तस्वीर बदल जाएगी?

जवाब है: उतनी नहीं जितनी बहस से लगती है।
•भारत के लगभग 94 प्रतिशत इंटरनेट उपयोगकर्ता मोबाइल पर चलते हैं, यानी भारत का इंटरनेट मूलतः टावर से चलता है।
•देश के छह लाख से अधिक गाँवों में से मई 2026 तक लगभग 11,000 गाँव ही 4G से वंचित बताए गए। इनके लिए सरकार की अपनी योजना है: बीएसएनएल के माध्यम से 4G टावर और भारतनेट के तहत लाखों किलोमीटर फाइबर।

•सरकार ने स्टारलिंक को लगभग 20 लाख ग्राहकों तक की ही अनुमति देने की बात कही है, जो कुल उपयोगकर्ताओं का एक छोटा-सा हिस्सा है।

•ग्रामीण भारत में प्रति व्यक्ति औसत मासिक खर्च लगभग ₹4,000 के आसपास है। ₹3,000 मासिक शुल्क और ₹33,000 की डिश उसके लिए पहुँच से बाहर है।

इसलिए स्टारलिंक के असली ग्राहक वे हैं जहाँ टावर कभी नहीं पहुँच सकता: समुद्र में चलते जहाज, उड़ान में विमान, लद्दाख जैसी ऊँचाई की बस्तियाँ, जंगल के बीच के अस्पताल, और आपदा के समय जब टावर गिर जाएँ। नवंबर 2025 में महाराष्ट्र सरकार ने दूरदराज इलाकों के लिए स्टारलिंक के साथ आशय-पत्र (LoI) पर हस्ताक्षर किए थे।



जहाँ टावर नहीं पहुँचते: पहाड़ी बस्तियाँ, जंगल का अस्पताल, समुद्र में जहाज, उड़ान में विमान और बाढ़ में डूबा टावर

भारतनेट पर एक कड़वा सच भी दर्ज करना चाहिए। रिपोर्टों के अनुसार 2026 की कैग लेखा-परीक्षा में पाया गया कि बड़े खर्च के बावजूद केवल लगभग एक-तिहाई पंचायतों में सेवा चालू है। फाइबर बिछ चुकी है, पर चालू होना बाकी है। विदेशी कंपनी से सवाल पूछना जितना जरूरी है, अपनी योजनाओं से जवाबदेही माँगना उतना ही।

जियो और एयरटेल: डर भी, धंधा भी

जियो के पास सैटेलाइट इंटरनेट पहले से है। 2022 में उसने लक्ज़ेमबर्ग की कंपनी एसईएस से गठजोड़ किया और अक्टूबर 2023 में इंडिया मोबाइल कांग्रेस में "जियो स्पेस फाइबर" का प्रदर्शन किया, जो गुजरात के गिर, छत्तीसगढ़ के कोरबा, ओडिशा के नबरंगपुर और असम के जोरहाट जैसे दूरस्थ क्षेत्रों में चला। एसईएस के उपग्रह लगभग 8,000 किमी पर हैं, इसलिए जियो अपना निचली कक्षा वाला समूह भी चाहता है। रिपोर्टों के अनुसार जुलाई 2026 में इन-स्पेस ने लगभग 1,600 उपग्रहों की उसकी योजना को तकनीकी रूप से उचित माना। जियो की क्षमता योजना स्टारलिंक की स्वीकृत क्षमता से कई गुना बड़ी बताई गई है। आकाश अंबानी ने इसे "संप्रभु क्षमता" कहा, यानी वह स्विच भारत के हाथ में रहेगा। एयरटेल समर्थित वनवेब के 600 से अधिक उपग्रह पहले से कक्षा में हैं।

जियो का हिसाब सीधा है: स्टारलिंक देर से आई तो जियो अपने उपग्रह पहले उतारेगा, और स्टारलिंक आई तो उसकी डिशें जियो की दुकानों से बिकेंगी। 2024 की चिट्ठियों में डर था, आज वह डर कारोबार की रणनीति में बदल चुका है। (ध्यान रहे कि चिट्ठियाँ मार्च 2025 के समझौते से पहले की थीं।)

राजनीति ने भी रंग भरा

8 अक्टूबर की रात विपक्ष के नेता राहुल गांधी ने एक्स पर लिखा कि मस्क का "भारत में स्वागत है" और "दूसरे व्यक्ति" के बारे में जानने तक इंतजार करें, जिसे व्यापक रूप से गौतम अडानी की ओर इशारा समझा गया। मस्क ने जवाब में उन्हें धन्यवाद दिया। अगले दिन 9 अक्टूबर को दूरसंचार मंत्री सिंधिया ने इंडिया मोबाइल कांग्रेस के मंच से कहा कि भारत किसी भी क्षेत्र में एकाधिकार नहीं बनने देता और लाइसेंस तीन कंपनियों के पास हैं, एक के पास नहीं। भाजपा के राम माधव ने राहुल गांधी पर तंज किया और बीआरएस के केटीआर ने मस्क से "ओलिगार्क" का नाम बताने को कहा। प्रधानमंत्री की ओर से अब तक कोई टिप्पणी नहीं आई।

विपक्ष के लिए यह सरकार और बड़े उद्योगपतियों की नजदीकी की कहानी है, सरकार के लिए सुरक्षा और समान नियमों की, और मस्क के लिए एक विशाल बाजार की।

तो असली बॉस कौन?

स्टारलिंक भारत आएगी, लेकिन देश की शर्तों पर। अभी तीन दरवाजे बाकी हैं: सुरक्षा मंजूरी, स्पेक्ट्रम की कीमत और विदेशी निवेश की स्वीकृति। इन पर जियो और वनवेब भी उसी कतार में हैं। आने पर सीमाएँ भी साथ होंगी: लगभग 20 लाख ग्राहक, 200 Mbps तक की गति और सीमित क्षमता।

•अंबानी? नहीं। स्पेक्ट्रम का सबसे बड़ा फैसला उनके विरुद्ध गया।

•मस्क? नहीं। स्विच का रिमोट वाशिंगटन से जुड़ा बताया जाता है और ब्राजील में वे कुछ दिन में झुक गए थे।

•सरकार? अकेली नहीं, क्योंकि जिस दरवाजे पर स्टारलिंक खड़ी है, उसी पर जियो भी खड़ा है।

असली बॉस कोई व्यक्ति नहीं, वे लिखित शर्तें हैं, यानी देश का कानून।

संपादकीय राय

1. सस्ता हो, तभी स्वागत। देशी हो या विदेशी, जो गाँव तक सबसे सस्ता इंटरनेट पहुँचाए, उसका स्वागत है। पर ₹33,000 की डिश और ₹3,000 मासिक शुल्क आम परिवार की पहुँच से बाहर है।
2. सुरक्षा की शर्तें बिकाऊ नहीं। नेटवर्क और स्पेक्ट्रम देश की बुनियाद हैं। ये शर्तें न मस्क के लिए ढीली हों, न अंबानी के लिए। हर देश अपना हित देखता है, और "बराबर का मैदान" की माँग सुविधा देखकर नहीं हो सकती।
3. फैसला भारत का। हम अपनी योजनाओं पर भी सवाल पूछेंगे, जैसे भारतनेट की धीमी प्रगति पर। दुनिया का स्वागत है, पर फैसला वही हो जो देश के हित और सुरक्षा में हो।

जनजातीय पहचान केवल प्रमाणपत्र नहीं, संविधान से जुड़ी सामाजिक-सांस्कृतिक विरासत

परंपरा, रीति-रिवाज और संवैधानिक संरक्षण के बीच इलाहाबाद हाईकोर्ट का महत्वपूर्ण संदेश

डॉ. भूपेंद्र कुमार सुल्लेरे



भारत का संविधान केवल व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा करने वाला दस्तावेज नहीं है, बल्कि यह देश की विविध सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक पहचान को भी संरक्षण प्रदान करता है। अनुसूचित जनजातियों के लिए संविधान में किए गए प्रावधान इसी व्यापक दृष्टिकोण का हिस्सा हैं। इसलिए अनुसूचित जनजाति का दर्जा केवल सरकारी प्रमाणपत्र या आरक्षण का विषय नहीं है, बल्कि उसके पीछे एक विशिष्ट सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान और ऐतिहासिक परिस्थितियों का भी महत्व है।

इसी संदर्भ में इलाहाबाद हाईकोर्ट का हालिया फैसला महत्वपूर्ण है। न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि केवल धर्म परिवर्तन से किसी व्यक्ति का अनुसूचित जनजाति का दर्जा स्वतः समाप्त नहीं हो जाता। लेकिन यदि कोई व्यक्ति अपनी जनजातीय सामाजिक व्यवस्था, परंपराओं और रीति-रिवाजों से पूरी तरह अलग होकर एक नई सामाजिक एवं धार्मिक पहचान अपना लेता है, तो उसे अनुसूचित जनजाति को मिलने वाले सुरक्षात्मक लाभों का दावा करने के लिए अपनी जनजातीय पहचान की निरंतरता साबित करनी पड़ सकती है। यह अंतर अत्यंत महत्वपूर्ण है। क्योंकि इस फैसले का अर्थ यह नहीं है कि संविधान किसी व्यक्ति को अपना धर्म चुनने से रोकता है। भारत का संविधान व्यक्ति को अंतःकरण और धर्म की स्वतंत्रता देता है। प्रश्न तब उत्पन्न होता है, जब किसी विशेष संवैधानिक संरक्षण का दावा करने वाला व्यक्ति उस समुदाय की सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान से स्वयं को पूरी तरह अलग कर चुका हो, जिसके आधार पर वह संरक्षण प्राप्त करना चाहता है।

संविधान में ST की व्यवस्था क्या कहती है?

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 342 के तहत राष्ट्रपति किसी राज्य या केंद्रशासित प्रदेश के संबंध में किन जनजातियों या जनजातीय समुदायों को अनुसूचित जनजाति माना जाएगा, यह अधिसूचना द्वारा निर्दिष्ट करते हैं। इस सूची में परिवर्तन करने की शक्ति संसद के पास है। सुप्रीम कोर्ट ने भी स्पष्ट किया है कि किसी समुदाय को अनुसूचित जनजाति के रूप में संवैधानिक मान्यता मिलने के लिए अनुच्छेद 342 के तहत राष्ट्रपति की अधिसूचना मूल आधार है। साथ ही, ST की पहचान राज्य-विशिष्ट भी हो सकती है।

संविधान के अनुच्छेद 366(25) में भी अनुसूचित जनजातियों की संवैधानिक परिभाषा को अनुच्छेद 342 के संदर्भ से जोड़ा गया है। इसका अर्थ यह है कि ST का दर्जा सामान्य सामाजिक पहचान की तरह केवल व्यक्ति की निजी घोषणा से निर्धारित नहीं होता। इसके पीछे संविधान, राष्ट्रपति की अधिसूचना और संबंधित कानूनों की व्यवस्था होती है।

क्या धर्म परिवर्तन से ST दर्जा समाप्त हो जाता है?

यहीं इस पूरे विवाद का सबसे महत्वपूर्ण संवैधानिक पक्ष सामने आता है।

सुप्रीम कोर्ट ने अपने विभिन्न निर्णयों में यह दृष्टिकोण अपनाया है

कि सिर्फ धर्म बदल लेने से कोई व्यक्ति स्वतः अपनी जनजातीय सदस्यता नहीं खो देता। लेकिन धर्म परिवर्तन के बाद व्यक्ति वास्तव में अपनी मूल जनजातीय सामाजिक पहचान से जुड़ा हुआ है या नहीं, यह तथ्यात्मक प्रश्न हो सकता है। सुप्रीम कोर्ट के एक निर्णय में स्पष्ट किया गया कि धर्म परिवर्तन अपने आप जनजातीय सदस्यता समाप्त करने का सार्वभौमिक नियम नहीं है। हालांकि यह भी देखा जा सकता है कि धर्म परिवर्तन के बाद व्यक्ति पूर्व समुदाय की सामाजिक परिस्थितियों, रीति-रिवाजों और परंपराओं से जुड़ा हुआ है या नहीं।

अर्थात कानून का दृष्टिकोण दो अतियों से बचता है।

पहली अति: धर्म परिवर्तन हुआ, इसलिए ST दर्जा उसी क्षण समाप्त। दूसरी अति: जन्म से ST था, इसलिए जीवनभर परिस्थितियां चाहे जैसी हों, ST से जुड़े हर सुरक्षात्मक लाभ का दावा स्वतः बना रहेगा। न्यायालयों ने इन दोनों के बीच तथ्य और कानून पर आधारित रास्ता अपनाया है।

इलाहाबाद हाईकोर्ट के मामले में क्या हुआ?



हालिया मामले में सोनभद्र की याचिकाकर्ता ने जन्म से अनुसूचित जनजाति का सदस्य होने का दावा किया था। उसने ST प्रमाणपत्र भी प्राप्त किया था और बाद में अनुसूचित जनजाति के सदस्यों से कृषि भूमि खरीदी थी।

राजस्व जांच में उसके विवाह, धार्मिक पहचान और सामाजिक जीवन से जुड़े तथ्य सामने आए। रिपोर्ट के अनुसार उसने कई दशक पहले मुस्लिम व्यक्ति से विवाह किया था और इस्लामी रीति से विवाह के बाद उसका सामाजिक-धार्मिक जीवन उसकी मूल जनजातीय परंपराओं से अलग पाया गया। हाईकोर्ट के सामने ऐसा पर्याप्त साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जा सका जिससे यह साबित हो कि धर्म परिवर्तन और विवाह के बावजूद वह अपनी जनजातीय सामाजिक एवं सांस्कृतिक परंपराओं से जुड़ी रही। इसी तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में अदालत ने राजस्व अधिकारियों के आदेश में हस्तक्षेप करने से इनकार किया।

इसलिए इस फैसले को केवल "धर्म परिवर्तन से ST दर्जा खत्म" कहना सही कानूनी निष्कर्ष नहीं होगा।

असल प्रश्न है-क्या व्यक्ति धर्म परिवर्तन के बाद भी अपनी मूल जनजातीय सामाजिक पहचान और समुदाय से वास्तविक रूप से जुड़ा हुआ है?

जनजातीय परंपराएं केवल रीति-रिवाज नहीं हैं

भारत की जनजातीय सभ्यताएं हजारों वर्षों से प्रकृति, भूमि, जल, जंगल, सामुदायिक जीवन और स्थानीय परंपराओं से जुड़ी रही हैं। अनेक जनजातीय समुदायों में सामाजिक संबंध, विवाह, उत्तराधिकार, सामुदायिक निर्णय, भूमि संबंधी परंपराएं और धार्मिक-सांस्कृतिक व्यवहार विशिष्ट स्वरूप रखते हैं। इसलिए जनजातीय पहचान को केवल जाति प्रमाणपत्र के एक कागज तक सीमित कर देना उसके व्यापक सामाजिक अर्थ को छोटा करना होगा।

ST के लिए संविधान में आरक्षण और अन्य सुरक्षात्मक प्रावधान इसलिए बनाए गए क्योंकि इन समुदायों ने ऐतिहासिक रूप से सामाजिक और आर्थिक वंचना का सामना किया है। अनुच्छेद 15(4) राज्य को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों तथा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान करने की अनुमति देता है। अनुच्छेद 16(4) सार्वजनिक रोजगार में पिछड़े वर्गों के लिए प्रतिनिधित्व संबंधी विशेष प्रावधानों का आधार प्रदान करता है। अनुच्छेद 46 राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शैक्षणिक एवं आर्थिक हितों को विशेष रूप से बढ़ावा देने और उन्हें सामाजिक अन्याय तथा शोषण से बचाने का निर्देश देता है। इसके अलावा संविधान की पंचम और षष्ठम अनुसूचियां भी जनजातीय क्षेत्रों के प्रशासन और उनकी विशिष्ट परिस्थितियों के संरक्षण की संवैधानिक व्यवस्था का हिस्सा हैं।

भूमि संरक्षण का प्रश्न क्यों महत्वपूर्ण है?

इलाहाबाद हाईकोर्ट का मामला केवल आरक्षण से संबंधित नहीं था। इसमें जनजातीय भूमि की सुरक्षा का प्रश्न भी जुड़ा था। जनजातीय क्षेत्रों में भूमि केवल आर्थिक संपत्ति नहीं होती। वह आजीविका, सामाजिक पहचान और पीढ़ियों से चली आ रही सामुदायिक व्यवस्था से जुड़ी होती है। इसलिए अनेक राज्यों में अनुसूचित जनजातियों की भूमि के हस्तांतरण पर विशेष कानूनी प्रतिबंध हैं। ऐसे कानूनों का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि ऐतिहासिक रूप से कमजोर जनजातीय समुदायों की भूमि आर्थिक दबाव, शोषण या अनुचित हस्तांतरण के कारण उनके हाथ

से बाहर न चली जाए।
इसलिए यदि कोई व्यक्ति किसी जनजातीय भूमि संरक्षण कानून के अंतर्गत विशेष अधिकार का दावा करता है, तो उसकी पात्रता और वास्तविक सामाजिक स्थिति की जांच का प्रश्न महत्वपूर्ण हो सकता है।

लेकिन संविधान व्यक्ति की धार्मिक स्वतंत्रता भी देता है
यहां एक संवैधानिक संतुलन को समझना जरूरी है।
भारत एक धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक गणराज्य है। संविधान व्यक्ति को अंतःकरण और धर्म की स्वतंत्रता देता है। इसलिए किसी व्यक्ति के धर्म परिवर्तन को मात्र इस आधार पर अपराध या संवैधानिक अधिकारों के नुकसान के रूप में नहीं देखा जा सकता। सुप्रीम कोर्ट ने भी यही अंतर रेखांकित किया है कि धर्म परिवर्तन मात्र से ST सदस्यता समाप्त होने का कोई सार्वभौमिक नियम नहीं बनाया जा सकता। मामले की परिस्थितियां देखना आवश्यक है। इसलिए हाईकोर्ट के निर्णय का व्यापक संवैधानिक अर्थ यह नहीं है कि "जनजाति छोड़कर दूसरा धर्म अपनाना अपराध है।"
बल्कि प्रश्न यह है कि—
जिस व्यक्ति की जनजातीय पहचान के संरक्षण के लिए संविधान और कानून ने विशेष अधिकार दिए हैं, क्या वह व्यक्ति वास्तव में उस जनजातीय समुदाय की सामाजिक पहचान से अभी भी जुड़ा हुआ है?

अधिकार के साथ पहचान की निरंतरता भी महत्वपूर्ण
संवैधानिक आरक्षण और संरक्षण सामाजिक न्याय के उपकरण हैं। इनका उद्देश्य उन समुदायों को अवसर और सुरक्षा देना है जिन्हें ऐतिहासिक परिस्थितियों के कारण इसकी आवश्यकता रही है।
इसलिए इन अधिकारों का उपयोग वास्तविक पात्रता के आधार पर होना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति अपनी जनजातीय पहचान को बनाए रखते हुए दूसरे धर्म को स्वीकार करता है और समुदाय के सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन से जुड़ा रहता है, तो केवल धर्म के आधार पर उसका मामला स्वतः समाप्त मान लेना संविधान की धर्मनिरपेक्ष भावना से टकरा सकता है। लेकिन यदि कोई व्यक्ति लंबे समय से अपनी मूल जनजातीय सामाजिक व्यवस्था से पूरी तरह अलग हो चुका है, एक अलग सामाजिक पहचान अपना चुका है और फिर भी केवल पुराने प्रमाणपत्र के आधार पर जनजातीय संरक्षण का दावा करता है, तो न्यायालय उस दावे की वास्तविकता की जांच कर सकता है। यही इस फैसले का सबसे महत्वपूर्ण कानूनी संदेश है।

जनजातीय समाज की पहचान की रक्षा क्यों जरूरी?
आज जब विकास, शहरीकरण, रोजगार, शिक्षा और वैश्वीकरण के कारण समाज तेजी से बदल रहा है, तब जनजातीय संस्कृति के संरक्षण का प्रश्न और महत्वपूर्ण हो गया है। जनजातीय समाज को विकास की मुख्यधारा से जोड़ना आवश्यक है, लेकिन विकास का अर्थ उसकी सांस्कृतिक अस्मिता का समाप्त होना नहीं होना चाहिए। जनजातीय विकास का अर्थ है—शिक्षा मिले, रोजगार मिले, स्वास्थ्य मिले,तकनीक मिले, आर्थिक अवसर मिले; लेकिन साथ ही भाषा, लोककला, परंपरा,सामुदायिक संबंध और सांस्कृतिक आत्मविश्वास भी सुरक्षित रहे। संविधान का उद्देश्य भी यही संतुलन स्थापित करना है
—समान नागरिकता के साथ ऐतिहासिक रूप से वंचित समुदायों के लिए विशेष संरक्षण।

फैसले से उठने वाले व्यापक प्रश्न
इलाहाबाद हाईकोर्ट का फैसला कई महत्वपूर्ण प्रश्न सामने रखता है।

- क्या केवल जन्म से मिली पहचान जीवनभर संवैधानिक संरक्षण का आधार होनी चाहिए?
- क्या धर्म परिवर्तन के बाद भी जनजातीय पहचान स्वतः बनी रहती है?
- क्या व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार, विवाह, पारिवारिक जीवन, सामुदायिक संबंध और परंपराओं को भी देखा जा सकता है?
- क्या जनजातीय भूमि संरक्षण कानूनों के लाभ के लिए जनजातीय सामाजिक पहचान की निरंतरता महत्वपूर्ण है?

इन प्रश्नों का उत्तर प्रत्येक मामले के तथ्यों और लागू कानूनों के आधार पर ही दिया जा सकता है। सुप्रीम कोर्ट का दृष्टिकोण भी यही बताता है कि धर्म परिवर्तन के प्रभाव का प्रश्न परिस्थितिनिष्ठ हो सकता है। संविधान पहचान मिटाता नहीं, संरक्षण का आधार तय करता है। इलाहाबाद हाईकोर्ट का फैसला जनजातीय समाज के संदर्भ में संविधान की एक महत्वपूर्ण भावना की ओर ध्यान आकर्षित करता है—संवैधानिक संरक्षण का उद्देश्य वास्तविक सामाजिक वंचना और समुदाय की सुरक्षा से जुड़ा है।
इस फैसले को केवल धर्म परिवर्तन बनाम ST दर्जे के विवाद के रूप में देखना अधूरा होगा। असल बहस धर्म की स्वतंत्रता, जनजातीय पहचान, सामाजिक-सांस्कृतिक निरंतरता और संवैधानिक संरक्षण के बीच संतुलन की है। भारत का संविधान व्यक्ति को धर्म की स्वतंत्रता देता है, लेकिन साथ ही अनुसूचित जनजातियों के लिए विशेष संवैधानिक संरक्षण भी सुनिश्चित करता है। इन दोनों मूल्यों के बीच संतुलन ही संवैधानिक व्यवस्था की वास्तविक कसौटी है।

इसलिए संदेश स्पष्ट है

जनजातीय समाज को विकास चाहिए, लेकिन अपनी पहचान खोकर नहीं।
संवैधानिक अधिकार चाहिए, लेकिन वास्तविक पात्रता के आधार पर।
धार्मिक स्वतंत्रता चाहिए, लेकिन उसके साथ कानून द्वारा निर्धारित सामाजिक अधिकारों और दायित्वों की समझ भी जरूरी है। जनजातीय परंपराएं केवल अतीत की स्मृति नहीं हैं। वे उस समुदाय की सामाजिक पहचान, सामुदायिक जीवन और सांस्कृतिक निरंतरता का हिस्सा हैं। संविधान का उद्देश्य इन समुदायों को आधुनिक भारत की यात्रा में आगे बढ़ाना है—उनकी अस्मिता मिटाकर नहीं, बल्कि उनकी विशिष्ट पहचान का सम्मान करते हुए।
डॉ. भूपेंद्र कुमार सुल्लेरे
संदर्भ: Nanhki @ Naimunnisha, इलाहाबाद हाईकोर्ट, 14.09.2026।

सूचना की बाढ़, ज्ञान का सूखा

फोन में सब कुछ है। फिर समझ कहाँ रह जाती है?
रात के ग्यारह बजे हैं। आप सिर्फ मौसम देखने के लिए फोन उठाते हैं। पाँच मिनट बाद मौसम तो भूल चुके हैं, पर एक क्रिकेटर की शादी, किसी सड़क का झगड़ा और वजन घटाने के सात आसान तरीके देख चुके हैं। घड़ी में बारह बज गए। नींद गई। और सुबह उठकर आप एक भी ऐसी बात नहीं बता सकते जो सचमुच काम की हो।
ये सीन आपका भी है और मेरा भी।
हम सबसे ज्यादा जानने वाली पीढ़ी हैं, फिर भी?
आज एक आम नागरिक की जेब में जितनी जानकारीहै, उतनी सौ साल पहले के किसी राजा के पुस्तकालय में भी नहीं थी। बीमारी का नाम डालिए, दस सेकंड में इलाज हाजिर। खेती, कानून, सरकारी योजना, सब कुछ।

फिर भी कितने लोग सही फैसला ले पाते हैं? कितने लोग व्हाट्सऐप पर आई गलत खबर पहचान पाते हैं? कितने माता-पिता बच्चे के सवाल पर "इंटरनेट पर देख लो" कहने के बजाय खुद उसका सामना कर पाते हैं?

जानकारी मिलना एक बात है, समझ बनना दूसरी। जैसे गोदाम अनाज से भरा हो, पर किसी को रोटी बनाना न आता हो।

"जानकारी इकट्ठा होती है। ज्ञान पकता है। और पकने में समय लगता है।"

तीजन बाई, जिन्हें किसी स्क्रीन ने नहीं सिखाया

छत्तीसगढ़ की महान पंडवानी गायिका तीजन बाई (निधन: 5 जुलाई 2026) इसका सुंदर उदाहरण थीं। उन्होंने स्कूली शिक्षा नहीं ली। बचपन में उनके नाना बृजलाल पारधी महाभारत के प्रसंग गाते थे और नन्ही तीजन छिप-छिपकर उन्हें सुनतीं, और सुन-सुनकर कंठस्थ कर लेतीं। आगे चलकर लोक-कलाकार उमेद सिंह देशमुख से उन्होंने पंडवानी की बारीकियाँ सीखीं।
उस दौर में समुदाय में महिलाओं का मंच पर गाना-नाचना वर्जित माना जाता था। विरोध हुआ, निष्कासन तक झेला, पर तंबूरा नहीं छूटा। 13 साल की उम्र में उन्होंने पहली



सार्वजनिक प्रस्तुति दी।

सोचिए, महाभारत की पूरी कथा, घंटों तक, बिना किसी पन्ने या स्क्रीन के। और सिर्फ याद के भरोसे नहीं, भाव के साथ।
पंडवानी की दो शैलियाँ हैं: वेदमती, जिसमें बैठकर शांत भाव से गाते हैं, और कापालिक, जिसमें खड़े होकर नाचते-गाते अभिनय करते हैं। तब महिलाएँ बैठकर ही गाती थीं। तीजन बाई ने कापालिक चुनी। उनके हाथ का तंबूरा कभी भीम की गदा बन जाता, कभी अर्जुन का धनुष, कभी दुशासन की भुजा, तो कभी नई-नवेली दुल्हन की लाज।

महाभारत तो इंटरनेट पर पहले भी था, आज भी है। फिर भी फ्रांस, जर्मनी, इंग्लैंड और जापान के दर्शक, जो छत्तीसगढ़ी का एक शब्द नहीं जानते थे, उनके सामने मंत्रमुग्ध बैठे रहे। उन्हें पद्म श्री (1988), पद्म भूषण (2003) और पद्म विभूषण (2019) के साथ संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार (1995) और जापान का फुकुओका एशियाई संस्कृति पुरस्कार (2018) भी मिला।
कोई सर्च बॉक्स वो नहीं दे सकता जो तीजन बाई ने सालों तक सुनते, गाते और जीते हुए पाया। यही फर्क है। सूचना बाहर से मिलती है। ज्ञान भीतर उतरता है।



और हमारा दिमाग रीलें देखते हुए क्या कर रहा है?

फोन बंद करने के बाद कभी सोचिए कि पिछले कुछ मिनटों में आपने क्या देखा। कोई दृश्य याद रह जाता है, कोई संवाद, और कई बातें तुरंत धुँधली पड़ जाती हैं। कभी सामग्री याद होती है, लेकिन उसका क्रम या संदर्भ पकड़ में नहीं आता। इसका अनुभव होना और स्मरणशक्ति में स्थायी कमी सिद्ध होना अलग बातें हैं। हर भूल को रील्स का परिणाम कहना भी ठीक नहीं होगा।

हर नई रील के साथ विषय, आवाज और दृश्य बदलते हैं। ध्यान को बार-बार नई सामग्री की ओर जाना पड़ता है। ऐसे में जिस काम के लिए फोन उठाया था, वही पीछे छूट सकता है। याद को अर्थ और संदर्भ से जोड़ने के लिए ठहराव चाहिए; लगातार स्क्रॉल करना उस अवसर को कम कर सकता है। देखने को बहुत कुछ मिलता है, पर उस पर सोचने का समय कम मिलता है।

Chiossi और सहलेखकों के 2023 के एक प्रयोग में 60 प्रतिभागी शामिल थे। शोधकर्ताओं ने देखा कि व्यवधान के बाद पहले से तय काम याद रखने और करने में अलग-अलग सोशल मीडिया गतिविधियों का क्या असर पड़ा। इस प्रयोग में TikTok वाले समूह का प्रदर्शन आराम करने वाले समूह की तुलना में कम रहा। यह निष्कर्ष प्रयोग की परिस्थितियों में तय काम याद रखने से जुड़ा था; इसे स्मरणशक्ति की स्थायी क्षति का प्रमाण नहीं मानना चाहिए।

यह अध्ययन प्रॉस्पेक्टिव मेमोरी, यानी पहले से तय काम को सही समय पर याद रखने की क्षमता, से जुड़ा था। इसे हर व्यक्ति की पूरी स्मरणशक्ति घट जाने या मस्तिष्क के नेटवर्क निष्क्रिय होने का प्रमाण नहीं माना जा सकता। प्रयोग की परिस्थितियाँ और रोजमर्रा का जीवन भी एक जैसे नहीं होते।

इससे निकलने वाली व्यावहारिक बात सरल है: पढ़ते या काम करते समय बार-बार फोन की ओर जाने की आदत पर ध्यान दें। कुछ देर एक ही विषय के साथ रहें। जो पढ़ा या सुना है, उसे अपने शब्दों में कहकर देखें। अपने अनुभव को समझने की शुरुआत वहीं से हो सकती है।

ज्ञान की असली पहचान

एक पुराने संस्कृत सुभाषित में कहा गया है—

पुस्तकस्था तु या विद्या परहस्तगतं धनम्।
कार्यकाले समुत्पन्ने न सा विद्या न तद्धनम्॥

अर्थ: जो विद्या सिर्फ किताब में रखी है और जो धन दूसरे के हाथ में है, जरूरत पड़ने पर न वह विद्या काम आती है, न वह धन।

आज किताब के साथ फोन भी जानकारी सँभालता है। फिर भी सही अवसर पर काम वही आता है जिसे हमने समझा हो। तीजन बाई का उदाहरण इसी साधना की याद दिलाता है।

शरद पूर्णिमा की चांदनी में पुरखों का प्रकृति ज्ञान



बचपन में देखा जब आसमान साफ रहता था, तब चाँद की छटा कुछ अलग ही दिखाई देती थी। रात में छत पर निकलते तो लगता, चाँदनी ने पूरे संसार पर सफेद चादर बिछा दी है। घरों की छतों और आँगनों में खीर रखी जाती थी। सुबह उस खीर को प्रसाद के रूप में ग्रहण करने की उत्सुकता रहती थी। दादी बताती थी कि शरद पूर्णिमा की रात चंद्रमा की किरणें खीर में उतरती हैं और उसे अमृत तुल्य बना देती हैं।

अब स्थिति बदल रही है। शहरों में आसमान का साफ दिखाई देना ही अपने आप में एक अनुभव बनता जा रहा है। धूल, धुआँ, वाहनों का उत्सर्जन, निर्माण कार्यों से उड़ते कण और कृत्रिम रोशनी रात के प्राकृतिक दृश्य को प्रभावित करते हैं। कुछ देर के लिए छत पर खीर रखकर परंपराओं का निर्वहन तो करना पड़ता है।

शरद पूर्णिमा आश्विन मास की पूर्णिमा को मनाई जाती है। वर्षा ऋतु के बाद शरद का आगमन प्रकृति में कई परिवर्तन लेकर आता है। लगातार बरसते बादलों के हटने पर आकाश में विस्तार दिखाई देने लगता है। वातावरण में नमी, बादलों की उपस्थिति और स्थानीय मौसम के अनुसार रात की दृश्यता बदलती है। जब आकाश साफ होता है, तब चंद्रमा अधिक चमकीला और स्पष्ट दिखाई देता है।

शरद ऋतु की इसी प्राकृतिक सुंदरता का वर्णन श्रीमद्भागवत महापुराण के दशम स्कंध में मिलता है। श्रीकृष्ण की रासलीला के प्रसंग की शुरुआत करते हुए शुकदेवजी कहते हैं—

भगवानपि ता रात्रीः शारदोत्फुल्लमल्लिकाः।
वीक्ष्य रन्तुं मनश्चक्रे योगमायामुपाश्रितः॥
(श्रीमद्भागवत महापुराण, 10.29.1)

अर्थात: शरद ऋतु की उन रात्रियों में मल्लिका अर्थात चमेली के फूल खिले हुए थे। उन सुगंधित रात्रियों को देखकर भगवान श्रीकृष्ण ने अपनी योगमाया का आश्रय लेकर रासलीला की इच्छा की। इस श्लोक में शरद की रात केवल समय का उल्लेख नहीं है। खिले हुए फूल, उनकी सुगंध और रात्रि का वातावरण मिलकर उस ऋतु की एक सजीव तस्वीर प्रस्तुत करते हैं। शरद ऋतु का सौंदर्य भारतीय काव्य और धार्मिक आख्यानों में इसी तरह प्रकृति के रंगों, गंधों और प्रकाश के साथ प्रकट होता है।

इसी अध्याय के अगले श्लोक में चंद्रमा के उदय का काव्यमय चित्रण है—

तदोडुराजः ककुभः करैर्मुखं
प्राच्या विलिम्पन्नरुणेन शन्तमैः।
स चर्षणीनामुदगाच्छुचो मृजन्
प्रियः प्रियाया इव दीर्घदर्शनः॥
(श्रीमद्भागवत महापुराण, 10.29.2)

अर्थात: तारों के राजा चंद्रमा का उदय हुआ। उसकी कोमल किरणों ने पूर्व दिशा को लालिमा से रंग दिया और उसे देखने वालों के संताप को दूर करने वाला उसका रूप ऐसा लगा, जैसे लंबे समय बाद लौटा प्रिय अपनी प्रिया के मुख को स्नेह से सँवार रहा हो। यहाँ चंद्रमा का वर्णन केवल खगोलीय पिंड के रूप में नहीं, बल्कि मानवीय भावनाओं से जुड़े सौंदर्य के रूप में किया गया है। चंद्रमा की शीतलता और उसके उदय की प्रतीक्षा ने भारतीय साहित्य में प्रेम, शांति और आनंद के अनेक बिंब रचे हैं।

इसी प्रसंग के तीसरे श्लोक में पूर्ण चंद्रमा, कुमुदिनी और वन का चित्र मिलता है—

दृष्ट्वा कुमुद्वन्तमखण्डमण्डलं
रमाननाभं नवकुङ्कुमारुणम्।
वनं च तत्कोमलगोभी रञ्जितं
जगौ कलं वामदृशां मनोहरम्॥
(श्रीमद्भागवत महापुराण, 10.29.3)

अर्थात: पूर्ण और अखंड मंडल वाले चंद्रमा को देखकर, जिसकी आभा लक्ष्मी के मुख जैसी और रंग नई कुमकुम-लालिमा से युक्त बताया गया है, तथा चंद्रमा की कोमल किरणों से आलोकित वन को देखकर श्रीकृष्ण ने मधुर स्वर में बाँसुरी बजाई। इस वर्णन में चंद्रमा, कुमुदिनी और वन अलग-अलग वस्तुएँ नहीं हैं। वे एक ही प्राकृतिक दृश्य के अंग हैं। यह काव्यात्मक दृष्टि हमें याद दिलाती है कि रात का आकाश और धरती का जीवन एक-दूसरे से कटे हुए नहीं हैं। चंद्रमा का प्रकाश, वनस्पतियों का संसार और मनुष्य की अनुभूति मिलकर संस्कृति में अर्थ ग्रहण करते हैं।

हमारे पुरखों के जीवन में ऋतुओं का महत्व केवल तिथियों तक सीमित नहीं था। खेती, पशुपालन, भोजन, जल और दैनिक कामकाज मौसम के साथ बदलते थे। आकाश की स्थिति, हवा की दिशा, बादलों का आना-जाना, ओस पड़ना और फसलों का बढ़ना, ये सब जीवन के अनुभव से सीखे जाने वाले संकेत थे। आज हम मौसम की जानकारी मोबाइल पर देख लेते हैं, लेकिन पहले प्रकृति को देखना और उसके संकेतों को समझना दैनिक जीवन का हिस्सा था। शरद पूर्णिमा जैसे पर्वों में भी ऋतु परिवर्तन, चंद्रमा के दर्शन, सामूहिक पूजा और विशेष भोजन का मेल दिखाई देता है।

इस रात खीर बनाने और उसे चंद्रमा की रोशनी में रखने की परंपरा का धार्मिक महत्व है। लोकमान्यता में शरद पूर्णिमा के चंद्रमा को सोलह कलाओं से पूर्ण माना जाता है और उसकी किरणों को अमृतमयी कहा गया है। कई स्थानों पर खीर को रात भर चाँदनी में रखकर अगले दिन प्रसाद के रूप में ग्रहण किया जाता है। कुछ परंपराओं में इस रात को कोजागरी पूर्णिमा भी कहा जाता है और लक्ष्मी पूजा तथा रात्रि जागरण का विशेष महत्व है। इन मान्यताओं और रीति-रिवाजों का स्वरूप अलग-अलग क्षेत्रों में बदल सकता है।

खीर को इस परंपरा में स्थान मिलना भी अपने आप में अर्थपूर्ण है। चावल और दूध भारतीय भोजन संस्कृति के महत्वपूर्ण हिस्से रहे हैं। चावल धान की खेती से जुड़ा है और दूध पशुपालन से। इन दोनों से बनने वाली खीर सामान्य दिनों में भी पौष्टिक और प्रिय भोजन है, जबकि पर्वों पर इसे शुभ पकवान और प्रसाद का स्थान मिलता है।

अब उस दृश्य पर लौटें, जिसमें छत पर खीर रखकर पूरा परिवार सुबह उसका प्रसाद ग्रहण करता था। आज खुले वातावरण की गुणवत्ता पहले जैसी नहीं रही,विशेषकर घनी आबादी वाले नगरों में। हवा में मौजूद धूल और अन्य कण चाँदनी की दृश्यता को



प्रभावित करते हैं।

भोजन की स्वच्छता पर धूल-कणों का जमना, कीट-पतंगों का संपर्क, खुले में रखे जाने की अवधि और तापमान जैसे कारक असर डालते हैं।

हम चंद्रमा को अर्घ्य देते हैं, उसकी रोशनी में कुछ समय बिताते हैं, खीर बनाते हैं और उसे प्रसाद के रूप में ग्रहण करते हैं, तो इस परंपरा का आनंद लेने के लिए भोजन को पूरी रात खुले में छोड़ना अनिवार्य नहीं है। खीर को स्वच्छ पात्र में रखा जा सकता है, उसे धूल और कीटों से बचाया जा सकता है और भोजन की सुरक्षा के अनुरूप ठंडा रखा जा सकता है। पूजा के समय उसे चंद्रमा के सामने अर्पित करने की पारिवारिक परंपरा भी निभाई जा सकती है।

शरद पूर्णिमा का अवसर हमें अपने भोजन और पर्यावरण, दोनों पर विचार करने का मौका देता है। जिस धान से खीर बनती है, उसके लिए उपजाऊ मिट्टी, पर्याप्त जल और स्वस्थ कृषि पारिस्थितिकी जरूरी है। जिस दूध से खीर बनती है, उसका संबंध पशुपालन और चारे से है। जिस आकाश के नीचे हम खीर रखते हैं, वह भी प्रकृति का ही हिस्सा है। इस तरह एक कटोरी खीर के पीछे खेत, पानी, मिट्टी, पशु और मनुष्य के श्रम की पूरी श्रृंखला जुड़ी हुई है। इस संबंध को समझना भी प्रकृति के प्रति कृतज्ञता का एक रूप है।

मुझे बचपन की वह चाँदनी याद आती है, जिसमें छत पर रखी खीर सुबह तक चंद्रमा के प्रकाश में नहाई हुई मिलती थी। उन यादों को बचाए रखने का अर्थ यह नहीं कि हम आज की परिस्थितियों को अनदेखा कर दें। परंपरा तभी जीवंत रहती है, जब उसके साथ विवेक भी चलता है। शरद पूर्णिमा पर खीर अवश्य बनाइए, चंद्रमा को देखिए, परिवार के साथ पर्व मनाइए, लेकिन भोजन की स्वच्छता का ध्यान रखिए और उस आकाश को साफ रखने की चिंता भी कीजिए, जिसके नीचे यह परंपरा पीढ़ियों से निभाई जाती रही है।

आचार्य ललित मुनि
वरिष्ठ पत्रकार एवं लोक संस्कृति के अध्येता हैं।
साभार: विश्व संवाद केंद्र छत्तीसगढ़ (मूल प्रकाशन: 24 अक्टूबर 2026)

बस्तर दशहरा और मुरिया दरबार

लगभग 75 दिनों के महापर्व में देवी आस्था और लोकभागीदारी की परंपरा

दशहरा कहते ही मन में रामलीला, रावण के पुतले और विजयादशमी की संध्या उभरती है।

बस्तर में इसी नाम का पर्व हमें एक अलग सांस्कृतिक संसार में ले जाता है। यहाँ उत्सव का केंद्र माँ दंतेश्वरी हैं। उनके साथ गाँवों के देवी-देवता आते हैं, विशाल काष्ठ रथ तैयार होता है और दूर-दूर से पहुँचे ग्रामीण अपनी पीढ़ियों पुरानी जिम्मेदारियाँ निभाते हैं। रावण-दहन इस आयोजन का केंद्रीय प्रसंग नहीं है।

बस्तर दशहरा लगभग 75 दिनों में खुलने वाला एक विस्तृत अनुष्ठानिक क्रम है। इसकी शुरुआत वर्षा ऋतु में हरेली अमावस्या से होती है और प्रमुख आयोजन शारदीय नवरात्र तथा उसके बाद के दिनों में संपन्न होते हैं। इसलिए इसे केवल विजयादशमी की एक शाम में समेटकर समझना कठिन है। लकड़ी के पहले पूजन से लेकर देवी-देवताओं की विदाई तक अलग-अलग समुदायों की भागीदारी इसके स्वरूप को बनाती है।

इसी क्रम में मुरिया दरबार का स्थान विशेष है। रथयात्रा में दिखाई देने वाले समाज की आवाज यहाँ प्रशासन तक पहुँचती है। पर्व को समझने के लिए उसकी धार्मिक मान्यताओं के साथ इस संवाद की परंपरा को भी देखना होगा।



रोशनी से सजा बस्तर दशहरा का भव्य रथ और आसपास उमड़ा जनसमुदाय

पुरी की यात्रा और रथ की स्मृति

बस्तर की रथ-परंपरा का संबंध पंद्रहवीं शताब्दी के नरेश पुरुषोत्तम देव से जोड़ा जाता है। प्रचलित वृत्तांत के अनुसार उन्होंने जगन्नाथपुरी की यात्रा की और वहाँ उन्हें रथपति की उपाधि मिली। इस यात्रा की स्मृति बस्तर की जगन्नाथ उपासना और दशहरा, दोनों के सांस्कृतिक इतिहास में सुरक्षित है। एक जनश्रुति सोलह पहियों वाले रथ के वरदान अथवा भेंट की बात कहती है। उसके अनुसार चार पहिए भगवान जगन्नाथ की सेवा और शेष बारह माँ दंतेश्वरी को समर्पित हुए। आगे चलकर संचालन की सुविधा के लिए चार पहियों के फूल रथ और आठ पहियों के विजय रथ की परंपरा विकसित हुई। इस कथा के विवरण अलग-अलग लेखनों में कुछ भिन्न मिलते हैं; इसे लोकस्मृति के रूप में पढ़ना अधिक उचित है।

देवी दंतेश्वरी का राजपरिवार और बस्तर के लोकजीवन से गहरा संबंध रहा है। फिर भी इतने बड़े अंचल की आस्थाओं को किसी एक

सूत्र में बाँध देना आसान नहीं। स्थानीय देवपरंपराओं और राजवंशीय पूजा-पद्धतियों के लंबे संपर्क ने उत्सव का आज का रूप बनाया है। इसी मेल में गाँवों के देवता अपनी पहचान के साथ सम्मिलित होते हैं।



बस्तर दशहरा के रथ के विशाल काष्ठ पहिए—पीढ़ियों से चले आ रहे स्थानीय शिल्प-कौशल की जीवंत पहचान।

हरेली से नवरात्र तक की तैयारी

पाट जात्रा पर्व का पहला पड़ाव है। साल की लकड़ी का पूजन होता है और रथ निर्माण से जुड़ी तैयारी आरंभ होती है। स्थानीय विवरणों में इस लकड़ी से औजारों के बेंठ बनाने का उल्लेख मिलता है। यहाँ उपयोग में आने वाली वस्तु भी अनुष्ठान का हिस्सा बन जाती है। बाद में डेरी गड़ाई की रस्म रथ निर्माण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाती है।

नवरात्र के पहले काछनगादी का विधान आता है। मिरगान समुदाय की एक बालिका काछन देवी का प्रतिनिधित्व करती है। बेल के काँटों से तैयार झूले पर संपन्न होने वाले इस अनुष्ठान में लोकमान्यता के अनुसार देवी से पर्व और रथ संचालन की अनुमति ली जाती है। राजपरिवार की धार्मिक भूमिका के साथ समुदाय की इस परंपरागत भूमिका का निर्वहन भी आवश्यक माना जाता है।

नवरात्र के प्रारंभिक दिनों में सिरहासार भवन में जोगी बिठाई होती है। हलबा समुदाय का एक साधक निर्धारित स्थान पर नौ दिनों की साधना करता है और पर्व के निर्विघ्न संपन्न होने की कामना करता है। साधना के दौरान फलाहार और दूध सेवन का उल्लेख भी सांस्कृतिक विवरणों में मिलता है। नवमी के आसपास जोगी उठाई के साथ यह साधना पूरी होती है। इसके साथ नगर में फूल रथ की परिक्रमा का क्रम चलता है।

परंपरागत विवरण इसे द्वितीया से सप्तमी तक बताते हैं। चार पहियों वाले इस रथ पर देवी का छत्र प्रतिष्ठित होता है। उसे खींचने पहुँचे ग्रामीण और मार्ग पर एकत्र लोग उस सार्वजनिक दृश्य को आकार देते हैं, जिसके लिए बस्तर दशहरा दूर तक पहचाना जाता है।

इन रस्मों का अपना अनुशासन है। एक की तैयारी दूसरे के लिए रास्ता बनाती है। बाहर से देखने पर जो आयोजन अलग-अलग दिखाई देते हैं, स्थानीय समुदाय उन्हें एक लंबे क्रम की कड़ियों के रूप में निभाते हैं।

देव समागम और विजय रथ की यात्रा

महाअष्टमी की रात निशा जात्रा का आयोजन होता है। विशेष पूजा और परंपरागत बलि-विधान इसके अंग रहे हैं। इसका धार्मिक आशय अंचल के कल्याण और देवी की कृपा की कामना से जुड़ा है। इन अनुष्ठानों को उनके स्थानीय संदर्भ में समझना चाहिए।

अगले प्रमुख पड़ाव मावली परघाव में दंतेवाड़ा से आने वाली डोली और देवी के छत्र का स्वागत होता है। परघाव का भाव अगवानी से जुड़ा है। इस अवसर पर जगदलपुर में राजपरिवार, पुजारी, ग्रामीण और अन्य सहभागी एकत्र होते हैं। साथ ही विभिन्न गाँवों से अपने देवताओं के आंगा, छत्र तथा अन्य पूज्य



बस्तर दशहरा और मुरिया दरबार की परंपरा का प्रतीकात्मक चित्रण।

प्रतीक लेकर आए समुदायों की उपस्थिति पर्व को व्यापक देव-समागम का रूप देती है।

विजयादशमी से जुड़े भीतर रैनी के आयोजन में आठ पहियों वाला विजय रथ प्रमुख होता है। रथ को कुम्हड़ाकोट ले जाने की रस्म को लोकप्रिय भाषा में रथ चुराना कहा जाता है। बाहर रैनी में उसे वापस लाने और नए अन्न के सामूहिक भोजन की परंपरा है। इसमें मान-मनौव्वल और अपनत्व का भाव जुड़ा है। ग्रामीण यहाँ अपनी परंपरागत भूमिका निभाते हैं, जिसे वे अधिकार और सम्मान के साथ देखते हैं।

पर्व का अंतिम चरण भी एक ही विदाई में पूरा नहीं होता। काछन जात्रा, मुरिया दरबार, कुटुंब जात्रा और दंतेवाड़ा लौटने वाली डोली की विदाई के अपने अवसर हैं। कुटुंब जात्रा में सम्मिलित ग्राम देवी-देवताओं के प्रति आभार प्रकट किया जाता है। इसके बाद डोली और छत्र की ससम्मान विदाई पूरे आयोजन को पूर्णता देती है।

काष्ठ रथ में संचित लोकज्ञान

बस्तर दशहरा का विशाल रथ देखने वाले को सबसे पहले उसके आकार से प्रभावित करता है। थोड़ा ठहरकर देखें तो उसके पीछे काम करने वाले हाथ अधिक महत्वपूर्ण लगते हैं। लकड़ी की पहचान, पहियों और धुरों की बनावट, जोड़ बिठाने का अभ्यास तथा भारी संरचना को चलाने की समझ कारीगरों के काम में एक साथ दिखाई देती है। अलग-अलग गाँवों की जिम्मेदारियों और पीढ़ियों से चले आ रहे काष्ठ-कौशल का उल्लेख सांस्कृतिक अध्ययनों में मिलता है। इस काम में अनुभव साझा होता है। किसी नए हाथ का औजार पकड़ना और अनुभवी कारीगर की देखरेख में काम सीखना ऐसे ज्ञान के आगे बढ़ने का व्यावहारिक तरीका है। भारतीय ज्ञान परंपरा की चर्चा में इस तरह के श्रम और अभ्यास से अर्जित कौशल को उचित स्थान मिलना चाहिए।

रथ खींचना भी अपने आप में सामूहिक काम है। इतने बड़े ढाँचे के साथ दिशा और गति का तालमेल बनाए रखना पड़ता है। किसी एक व्यक्ति की ताकत से अधिक महत्व साथ चलने की समझ का होता है। इसी कारण इस आयोजन में निर्माण करने वालों, रथ चलाने वालों और अनुष्ठान निभाने वालों की भूमिकाएँ अलग होते हुए भी एक-दूसरे पर निर्भर हैं। इस लोकज्ञान के संरक्षण में कारीगर का सम्मान सबसे पहले आता है। उनके काम का दस्तावेज बने, नई पीढ़ी को सीखने का अवसर मिले और मेहनत का उचित प्रतिफल सुनिश्चित हो। केवल तैयार रथ की तस्वीर बचा लेने से उसे बनाने का कौशल सुरक्षित नहीं होगा।

रथ की परंपरा तभी पूरी होती है, जब उसे खींचने वाले समाज की आवाज भी सुनी जाए। मुरिया दरबार इसी संवाद की याद दिलाता है।

जंगल, जो कभी किताब नहीं बना

बस्तर में ज्ञान पढ़ा नहीं जाता, जिया जाता है



बस्तर में पहली बारिश से पहले आसमान देर तक गरजता है। शहर वाले छत से कपड़े उतारने दौड़ते हैं, और साल के पेड़ों वाले गाँवों में औरतें टोकरी उठा लेती हैं।

उन्हें पता है कि बादलों की यह गड़गड़ाहट जमीन के नीचे कुछ जगा देती है। गाँव के लोग कहते हैं, बादल न गरजें तो बोड़ा नहीं आता। फिर एक दिन साल की जड़ों के पास की मिट्टी हल्के से चटक जाती है और भीतर से झाँकता है बोड़ा, जमीन के नीचे पनपने वाला वह कवक, जो बाजार पहुँचते ही महँगी सब्जियों की कतार में जा खड़ा होता है। कहाँ खोदना है और कितना, यह कोई मशीन नहीं बताती। बरसों उसी मिट्टी को देखते-देखते आँखें खुद सीख जाती हैं।

सिखाया किसने होगा? शायद दादी ने, जो एक सुबह पोती को साथ ले गई और बिना कुछ बोले उँगली से एक जगह दिखा दी।



साल की जड़ों के पास मिट्टी से निकलता बोड़ा

पहले क्षमा, फिर पत्ता

जंगल से कुछ लेने का यहाँ का तरीका देखकर शहरी आदमी ठिठक जाता है। मान लीजिए किसी पौधे की पत्ती दवा में भी काम आती है और भोजन में भी। तब भी उसे जड़ से नहीं उखाड़ा जाता। जितनी जरूरत है, बस उतनी। और तोड़ने से पहले पेड़ के आगे हाथ जुड़ते हैं, क्षमा माँगी जाती है, तब जाकर उँगलियाँ आगे बढ़ती हैं। इन पौधों के औषधीय गुण जानने वालों से बात कीजिए तो वे भी यही कहते हैं कि पौधे के साथ ज्यादती हुई तो उसकी तासीर चली जाती है।

कंद-मूल हो या महुआ, बीनने निकले आदमी की टोकरी में सबसे पहला हिस्सा नहीं जाता। वह वहीं छूट जाता है, जंगल के जीवों और धरती के नाम। इसे 'धरती की भेंट' कहते हैं।

अपनी कमाई में से पहले किसी और का हिस्सा निकाल देने का ऐसा बही-खाता कम ही जगह मिलेगा।

पेड़ में बसे देवता

बस्तर के गोंड, मुरिया और माड़िया समाज में बूढ़ादेव, जिन्हें बड़ादेव भी कहा जाता है, सबसे ऊँचे देवता हैं। उनका ठिकाना साजा के पेड़ में माना जाता है, और साजा पर कुल्हाड़ी चलाने की बात सोचना भी वहाँ अपराध जैसा है।

महुआ और सल्फी से रिश्ता और गहरा है। इन्हें लोग पेड़ नहीं, कल्पवृक्ष कहते हैं। मान्यता है कि इन्हें नुकसान पहुँचाया जाए तो गाँव के देवता आंगा देव रुष्ट हो जाते हैं।



देवगुड़ी: पुराने पेड़ की जड़ों में बसी आस्था (प्रतीकात्मक चित्र)

हर गाँव में एक कोना देवगुड़ी का होता है। कुछ बूढ़े पेड़ों का झुरमुट, बीच में कोई पत्थर या लकड़ी का खंभा। वहाँ से सूखी टहनी तक कोई नहीं उठाता। कई जगह ये पेड़ सैकड़ों बरस से खड़े हैं, और इन्हें बचाए रखने में किसी बोर्ड या कानून से ज्यादा आस्था ने काम किया है। इनके नीचे बीज गिरते हैं, नई पौध उगती है, पंछी घोंसले बुनते हैं। जंगल का अपना बैंक, जिसमें से कोई पैसा नहीं निकालता।

जंगल का दरवाजा

घने जंगल की यात्रा पर निकले लोग प्रवेश-स्थल पर पत्थरों का एक छोटा ढेर बनाते हैं या साल के पत्ते चढ़ा देते हैं। इसे मावली माता या वन डोकरी की पूजा कहा जाता है, यानी जंगल की देवी से भीतर जाने की इजाजत। कहते हैं कि बिना पूछे घुसने वाला राह भटक सकता है, या किसी जंगली जानवर के सामने आ सकता है। किसी जीव को बेवजह सताना या शिकार करना वर्जित है, और वनोपज भी परंपरा और सीमा के भीतर ही जुटाई जाती है।

अब इन बातों को कितने लोग मानते हैं, यह अलग सवाल है। हमने गाँवों में लोगों से बात की तो किसी ने पूरे यकीन से बताया, किसी ने कंधे उचका दिए। पर बात आस्था के सही-गलत होने की है ही नहीं। बात उस आदत की है जो जंगल में पाँव रखने से पहले ठहरना सिखाती है। मानने वाले के लिए यह किसी के घर में जाने जैसा है, और घर में घुसने से पहले दरवाजे पर रुकना पड़ता है।



जब जंगल पर पहरा बैठा

बस्तर का जंगल से रिश्ता कितना अटूट है, इसका सबसे बड़ा सबूत 1910 का भूमकाल विद्रोह है, जिसकी अगुवाई वीर गुंडाधूर ने की थी।

अंग्रेजों ने वन-कानून बनाकर आदिवासियों के जंगल में घुसने, सूखी लकड़ी बीनने और महुआ चुनने तक पर पाबंदी लगा दी। बस्तर ने इसे अपनी अस्मिता पर हमला माना। लोगों का कहना था:

"जंगल हमारे पुरखों की थाती है, सरकार पेड़ों पर पहरा कैसे लगा सकती है?"

विद्रोह का संदेश किसी चिट्ठी में नहीं गया। एक गाँव से दूसरे गाँव हाथों-हाथ पहुँचीं लाल मिर्च, मिट्टी का ढेला, धनुष-बाण और आम की टहनियाँ। जिस समाज की पूरी बोली ही जंगल की चीजों से बनी हो, उसे संदेश भेजने के लिए कागज की क्या दरकार। बस्तर के लोग अपनी जान की परवाह किए बिना जंगल बचाने के लिए अंग्रेजी हुकूमत से भिड़ गए।

बस्तर के समाज के लिए जंगल कोई संसाधन नहीं है। वह घर है, मंदिर है, पहचान है, और इनके बिना उनकी संस्कृति की कल्पना भी नहीं की जा सकती।



भूमकाल के संदेश-वाहक: लाल मिर्च, मिट्टी का ढेला, आम की टहनी और धनुष-बाण

जानने वाले घट रहे हैं

आज की चिंता दूसरी है। यह सारा ज्ञान किसी किताब में दर्ज नहीं, इसलिए सबसे ज्यादा खतरे में भी यही है। पढ़ाई के लिए शहर गई पीढ़ी लौटती है तो हल्बी-गोंडी के कई शब्द रास्ते में छूट चुके होते हैं। कौन-सी जड़ किस तकलीफ में दी जाती थी, कौन-सी पत्ती कब तोड़नी है, इसके जानकार बुजुर्ग एक-एक कर कम होते जा रहे हैं। जिस दिन आखिरी जानकार गया, कोई पुस्तकालय नहीं जलेगा, फिर भी एक पूरा पुस्तकालय गायब हो जाएगा।

उम्मीद की एक किरण भी है। कुछ युवा अब दादा-दादी की बातें मोबाइल में रिकॉर्ड करने लगे हैं। वनोपज का वाजिब दाम मिले तो जानने वाले को रोजी भी मिलती है और इज्जत भी। ज्ञान उसी का बचता है जिससे किसी का चूल्हा जलता हो।

रुकना भी ज्ञान है

हल्बी-गोंडी अंचलों में एक कहावत चलती है:

"माटी बिन मानुस नई, जंगल बिन गियान नई।"

यानी मिट्टी के बिना इंसान नहीं, और जंगल के बिना ज्ञान नहीं।

हम ज्ञान को डिग्री, भाषा या मशीन से तौलने के आदी हो गए हैं। बस्तर का जंगल एक अलग पैमाना देता है: ज्ञान वह है जो बताए कि कब रुकना है।

जितना चाहिए, उतना लो। बाकी अगले साल के लिए छोड़ दो।



बुजुर्ग से सुनी बातें अब मोबाइल में सहेजी जा रही हैं

अगली बार किसी जंगल से गुजरें तो पेड़ों को फोटो की पृष्ठभूमि भर मत समझिएगा। हो सकता है आप उस किताब के सामने खड़े हों जिसे पढ़ने वाले अब बहुत कम बचे हैं।

जानिए

•बूढ़ादेव: गोंड, मुरिया, माड़िया समाज के सर्वोच्च देवता, जिनका वास साजा वृक्ष में माना जाता है

•देवगुड़ी: गाँव का पवित्र स्थान, जहाँ पेड़ काटना वर्जित है

•मावली माता / वन डोकरी: जंगल की देवी, जिनसे प्रवेश से पहले अनुमति ली जाती है

•धरती की भेंट: जंगल से कुछ लेते समय पहला हिस्सा वहीं छोड़ देने की परंपरा

भूमकाल (1910): वीर गुंडाधूर के नेतृत्व में जंगल और अधिकारों के लिए बस्तर का विद्रोह

जहाँ बादल खूब बरसते हैं, वहाँ प्यास क्यों रहती है?

मावसिनराम से मारवाड़ तक, और फिर छत्तीसगढ़ के अपने तरिया तक: पानी हमें एक पुरानी बात फिर याद दिला रहा है।



पारंपरिक जल-संचयन: बारिश को सहेजने की समझ (प्रतीकात्मक चित्र)

इस बार मानसून मेघालय पर मेहरबान नहीं रहा। दुनिया की सबसे ज्यादा बारिश वाली जगह कहलाने वाले मावसिनराम में हर साल औसतन 11,800 मिमी से ऊपर पानी गिरता है, मगर इस मौसम वह बादलों की राह ही तकता रह गया। 15 सितंबर तक पूरे राज्य में बारिश सामान्य से 59 प्रतिशत कम रही, जो देश में सबसे बड़ी कमी थी। चेरापूंजी और मावसिनराम वाले ईस्ट खासी हिल्स में यह कमी 53 प्रतिशत दर्ज हुई।

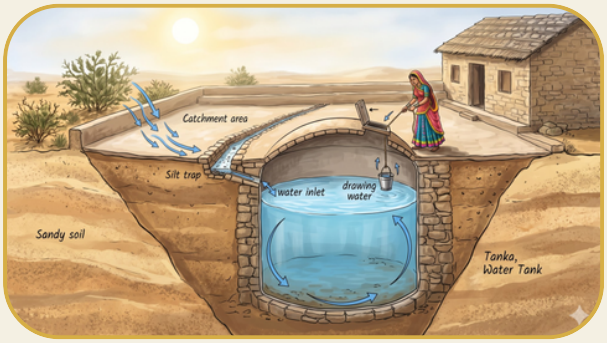
असर सबसे पहले झरनों पर दिखा। राज्य के करीब 80 प्रतिशत गाँव पीने और खेती के लिए इन्हीं झरनों पर टिके हैं, और मेघालय बेसिन विकास प्राधिकरण के एक शोधपत्र के मुताबिक करीब आधे झरने या तो सूख चुके हैं या कमजोर पड़ गए हैं।

यानी बारिश की राजधानी में भी प्यास का इंतजाम इस पर टिका है कि पहाड़ ने पानी को कितना थामा। ढलान पर गिरी बूँद को नीचे भागने में देर नहीं लगती।

रेगिस्तान का हिसाब

अब कहानी का दूसरा सिरा देखिए। जोधपुर के इलाके में साल भर में 320 मिमी के आसपास बारिश होती है, यानी मावसिनराम का करीब चालीसवाँ हिस्सा। देश के अत्यल्प वर्षा वाले क्षेत्रों में जैसलमेर भी है, जहाँ औसत दो सौ मिमी के इर्द-गिर्द ठहर जाता है और सूखे साल में 80 मिमी तक उतर आता है। फिर भी वहाँ के गाँव प्यास से हार नहीं मानते। फर्क इतना है कि उन्होंने बारिश का रोना नहीं रोया, उसका हिसाब रखा।

यह हिसाब कुछ यों चलता है। आँगन या खेत के किनारे एक ढकी हुई भूमिगत टंकी, जिसे वहाँ टाँका कहते हैं। मानसून से ठीक पहले उसके आगोर, यानी बारिश बटोरने वाली जमीन, की सफाई होती है, और बरसात का पानी ढलान से बहकर सीधे भीतर उतर जाता है। जोधपुर के मेहरानगढ़ किले में तो ऐसा एक कुंड 1759 में ही बन चुका था।



टाँके की बनावट: आगोर से बहकर आया पानी गाद रोकने वाली नाली से गुजरकर भूमिगत टंकी में जमा होता है।

जहाँ बारिश 200 से 300 मिमी के बीच रहती है और कभी 120 मिमी तक भी गिर जाती है, वहाँ ऐसे ढाँचे पीने भर का पानी जुटा देते हैं, कम बारिश वाले सालों में भी। जोधपुर के केंद्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान (CAZRI) का आकलन है कि सही

डिजाइन हो तो साल भर में सौ मिमी बारिश भी एक परिवार की घरेलू जरूरत निभा सकती है।

एक ईमानदार टिप्पणी जरूरी है। आज के बड़े शहर अकेले टाँकों के भरोसे नहीं चलते। पर गाँवों में यह परंपरा जिंदा है, और जैसलमेर के कई गाँवों में साठ बरस से पुरानी बेरियाँ आज भी काम दे रही हैं।



जैसलमेर की पारंपरिक जल-संरचना का एक चित्रण।

हरियाली का भ्रम

थार की हरियाली भी इन दिनों खूब चर्चा में है। आईआईटी गांधीनगर के विमल मिश्रा और उनके साथियों के अध्ययन के अनुसार दो दशक में थार में हरियाली 38 प्रतिशत बढ़ी, और इसी दौरान गर्मियों की मानसूनी बारिश 2001 के बाद 64 प्रतिशत बढ़ी। इससे यह मान लेना आसान है कि पेड़ों ने बादल बुला लिए। अध्ययन में हरियाली को नतीजा बताया गया है, कारण नहीं। उसके अनुसार हरियाली बढ़ने में बारिश का हिस्सा करीब 45 प्रतिशत और भूजल का करीब 55 प्रतिशत बैठता है, यानी आधे से ज्यादा हरापन जमीन के भीतर से खींचे पानी की देन है। साथ में चेतावनी भी है: गर्मी की चरम घटनाएँ बढ़ीं तो सूखे मौसम में पानी का संकट गहरा सकता है।

जिस हरियाली को भूजल खींचकर उगाया गया हो, उसकी उम्र उसी भूजल की उम्र है।

हमारे अपने आँगन में

अब अपने घर की बात। छत्तीसगढ़ पर प्रकृति कंजूस नहीं रही। यहाँ औसतन 1,200 से 1,400 मिमी बारिश होती है, यानी जोधपुर के इलाके से चार गुना के आसपास, और उसका करीब 90 प्रतिशत जून से सितंबर के चार महीनों में गिर जाता है। देश की लगभग दो प्रतिशत आबादी वाले इस राज्य के पास देश के सतही जल का करीब 3.2 प्रतिशत है।

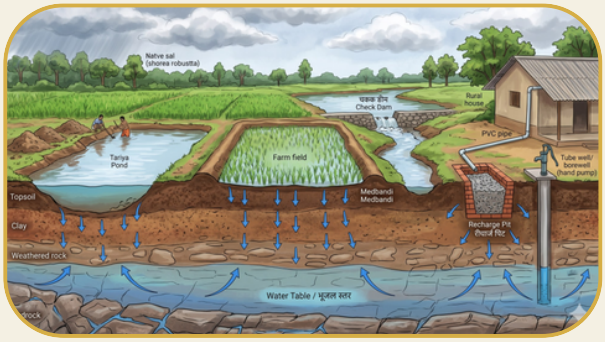
फिर भी बरसात का बड़ा हिस्सा महानदी के रास्ते ओडिशा की ओर निकल जाता है, और गर्मियों में मैदानी जिले प्यास की शिकायत करने लगते हैं। केंद्रीय भूजल बोर्ड के हिसाब से राज्य में भूजल दोहन औसतन 48 से 50 प्रतिशत है, जो 'सुरक्षित' श्रेणी में आता है। पर औसत अक्सर कहानी छिपा लेता है। दुर्ग, बेमेतरा, बालोद, धमतरी और राजनांदगाँव के कई ब्लॉकों में रबी धान के लिए ट्यूबवेल इतने चलते हैं कि दोहन 70 से 90 प्रतिशत, कहीं उससे भी ऊपर पहुँच गया है।

बारिश भरपूर, रोकने का इंतजाम कम, और निकालने की रफ्तार तेज।

आँकड़ों का विरोधाभास
सालाना औसत बारिश, मिलीमीटर में

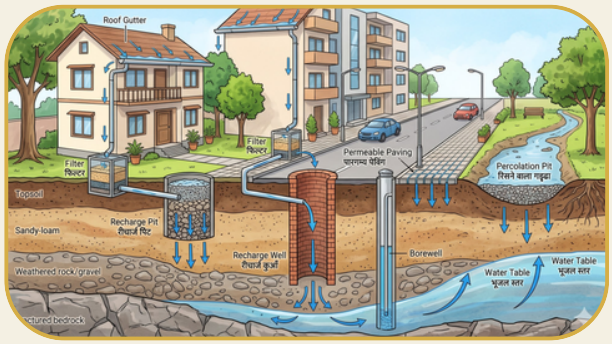
मावसिनराम	लगभग 11,800
छत्तीसगढ़	1,200–1,400
जोधपुर क्षेत्र	लगभग 320
जैसलमेर	लगभग 200

गाँव और शहर: दोनों के लिए रास्ता



गाँव में रिचार्ज: तरिया, मेड़बंदी, चेक डैम और रिचार्ज पिट मिलकर बरसात को भूजल तक पहुँचाते हैं।

गाँव में रास्ता सीधा है। तरिया-डबरी की गाद निकालकर उन्हें गहरा करना। खेत में मेड़बंदी, ताकि बरसात का पानी खेत में ही थमे और धीरे-धीरे नीचे उतरे। नालों पर छोटे चेक डैम। और हैंडपंप या बोरवेल के पास रिचार्ज पिट, जिसमें छत का पानी सीधे भीतर पहुँचे।



शहर में रिचार्ज: छत का पानी फिल्टर से होकर रिचार्ज पिट व कुएँ में, और पारगम्य पेविंग से सीधा जमीन में।

मावसिनराम हमें बताता है कि बारिश अकेली काफी नहीं होती। थार बताता है कि थोड़ी बारिश भी काफी हो सकती है, अगर उसे सँभालना आता हो। बादल तो अपने समय पर आते रहेंगे। सवाल इतना है कि जब आएँ, तब हमारे पास उनके लिए जगह तैयार मिले।

सूरज से रिश्ता: सौर ऊर्जा में भारत की भूमिका और जिम्मेदारी

नई दिल्ली में होने जा रही ISA असेंबली सिर्फ सोलर पैनल और ग्रिड की बैठक नहीं है। यह उस सोच की परीक्षा भी है, जो हजारों साल पहले कह चुकी थी कि प्रकृति से लो, तो लौटाना भी सीखो।



सौर पैनलों का विस्तृत परिसर: स्वच्छ बिजली उत्पादन की दिशा में एक कदम।

सौर सहयोग के लिए दिल्ली में जुटेगी दुनिया

नई दिल्ली 2 से 5 नवंबर 2026 तक एक ऐसी बैठक की मेजबानी करने जा रही है, जिसकी चर्चा आम आदमी तक कम पहुँचती है, पर जिसका असर उसके बिजली के बिल से लेकर उसके बच्चों की साँसों तक जाएगा। अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन (International Solar Alliance, ISA) की नौवीं असेंबली में सदस्य देशों के मंत्री, ऊर्जा विशेषज्ञ और विकास-वित्त से जुड़ी संस्थाएँ एक मेज पर होंगी। पिछली, आठवीं असेंबली अक्टूबर 2025 में हुई थी, जिसमें सदस्य और हस्ताक्षरकर्ता देशों के प्रतिनिधियों तथा अन्य हितधारकों ने भाग लिया था।

इस मंच का एजेंडा सीधा है। सौर ऊर्जा सस्ती कैसे हो, वह उन घरों तक कैसे पहुँचे जहाँ आज भी तार नहीं पहुँचा, और अलग-अलग देशों के सोलर ग्रिड एक-दूसरे से कैसे जुड़ें, ताकि जहाँ सूरज ढल चुका हो वहाँ दूसरे छोर की धूप काम आ सके। "वन सन, वन वर्ल्ड, वन ग्रिड" का विचार इसी जुड़ाव का नाम है।

ISA की कहानी भी कम दिलचस्प नहीं। 2015 में पेरिस जलवायु सम्मेलन के मंच पर भारत और फ्रांस ने इसकी नींव रखी। आज इसका मुख्यालय गुरुग्राम में है, भारत इसका अध्यक्ष है और फ्रांस सह-अध्यक्ष। किसी अंतरराष्ट्रीय संधि-आधारित संगठन का मुख्यालय भारत में होना अपने आप में एक संकेत है।

भारत के लिए यह क्यों मायने रखता है

जिस देश में साल के लगभग तीन सौ दिन धूप खिलती हो, वह अपनी ऊर्जा के लिए दूसरों के कुओं और जहाजों पर कब तक टिका रहेगा? भारत अपनी जरूरत का बड़ा हिस्सा तेल और गैस के रूप में बाहर से मँगाता है। हर बार जब दुनिया में कहीं युद्ध छिड़ता है, कीमत हमारी रसोई तक पहुँचती है। इस निर्भरता को घटाने के सबसे ठोस उपायों में सौर ऊर्जा शामिल है, हालाँकि भंडारण और लागत की चुनौतियाँ अपनी जगह कायम हैं।

इस दिशा में देश की रफ्तार बीते कुछ वर्षों में चौंकाने वाली रही। 2025 में भारत ने अपनी स्थापित बिजली क्षमता का आधा हिस्सा गैर-जीवाश्म स्रोतों से जुटा लिया (यह स्थापित क्षमता की बात है, कुल उत्पादित बिजली की नहीं), तय लक्ष्य से पाँच साल पहले। प्रधानमंत्री सूर्य घर योजना ने छत की धूप को एक करोड़ परिवारों के बिजली-बिल से जोड़ने का सपना दिया है।

अब जरा आँकड़ों से हटकर सोचिए। नारायणपुर या बीजापुर के किसी भीतरी गाँव में शाम ढलते ही जो अँधेरा उतरता है, वह बच्चे की पढ़ाई, महिला की रसोई और बुजुर्ग की दवा, तीनों को छोटा कर देता है। मिनी-ग्रिड या घरेलू सोलर व्यवस्था उन घरों और स्थानीय सेवाओं तक बिजली पहुँचाती है, और सोलर पंप सिंचाई तथा पानी की उपलब्धता को आसान करता है। इस तरह तकनीक समय और श्रम लौटा देती है। ISA की बैठकों में होने वाले फैसले आखिरकार इसी गाँव तक पहुँचने के लिए होते हैं।



दशाश्वमेध घाट, काशी: संध्या महाआरती के दौरान पुष्प वर्षा और दीपों की अलौकिक छटा।

दुनिया भारत की ओर क्यों देखती है

इसका जवाब किसी एक कारण में नहीं है। पहला कारण पैमाना है। जब कोई देश करोड़ों लोगों के बीच, सीमित संसाधनों में, सौर परियोजनाओं की लागत रिकॉर्ड निचले स्तर तक ले आए, तो बाकी विकासशील देश उसे प्रयोगशाला नहीं, मॉडल की तरह देखते हैं।

दूसरा कारण अनुभव है। भारत ने गाँव-गाँव बिजली पहुँचाने की जद्दोजहद खुद झेली है। जिसने अँधेरे से उजाले का सफर अपने पाँव चलकर तय किया हो, उसकी सलाह में नसीहत कम और अनुभव ज्यादा होता है। अफ्रीका और छोटे द्वीपीय देश इसी वजह से भारत की बात ध्यान से सुनते हैं।

तीसरा, और शायद सबसे अहम, कारण भरोसा है। यह नेतृत्व काफी हद तक साझेदारी के भरोसे पर टिका दिखता है। भारत दाता और याचक का रिश्ता बनाने के बजाय साझेदारी की भाषा बोलता है, और विकासशील दुनिया को यही भाषा सहज लगती है। हाँ, इसमें हितों का गणित भी है, जिसे नकारना ईमानदारी न होगी।

जड़ में क्या है: एक सोच जो नुमाइश नहीं, संस्कार है

अब वह सवाल, जो खबर के पीछे बैठा है। क्या भारत की यह भूमिका केवल कूटनीति और अर्थशास्त्र का नतीजा है, या इसके नीचे कोई गहरी परत भी है?

पूरी ईमानदारी से कहें तो यह दावा नहीं किया जा सकता कि सौर गठबंधन किसी श्लोक से जन्मा। इसके पीछे ऊर्जा-सुरक्षा, बाजार और रणनीति की ठोस गणनाएँ हैं। फिर भी एक बात अनदेखी नहीं की जा सकती: जिस मिट्टी में यह विचार उगा, उस मिट्टी की सोच ही अलग रही है।

यहाँ प्रकृति उपभोग की वस्तु नहीं, परिवार की सदस्य रही है। ईशावास्योपनिषद का पहला मंत्र कहता है कि यह सारा जगत ईश्वर से व्याप्त है, इसलिए त्यागपूर्वक भोगो। यानी लो, पर इस भाव से कि यह तुम्हारा नहीं है। अथर्ववेद का पृथ्वी सूक्त धरती को माता और मनुष्य को उसका पुत्र कहता है। ऋग्वेद सूर्य को केवल प्रकाश नहीं, चर-अचर जगत की आत्मा कहता है। और "सर्वे भवन्तु सुखिनः" की प्रार्थना में सुख की गिनती सिर्फ मनुष्यों तक नहीं रुकती। नदी यहाँ माँ है, पर्वत देवता, पीपल और तुलसी आँगन के सदस्य। इन सांस्कृतिक प्रतीकों का महत्त्व आज तभी सार्थक होगा,जब वे पेड़ों, नदियों और जंगलों की देखभाल में भी दिखाई दें।

जब कण-कण में ईश्वर माना जाए, तो प्रकृति को पहुँचाई गई हर चोट पूरे कुटुंब की चोट बन जाती है। "वसुधैव कुटुम्बकम्" शब्दों में उदार लगता है, पर असल में यह एक कठोर जिम्मेदारी का सिद्धांत है।

जरा तुलना कीजिए। संयुक्त राष्ट्र ने 1972 में विश्व पर्यावरण दिवस की घोषणा की और इसका पहला आयोजन 5 जून 1973 को हुआ। भारत में प्रकृति का पूजन और संरक्षण हजारों बरस पुरानी परंपरा है। संभव है कि हमारे ऋषियों ने इस आशंका को पहले ही भाँप लिया हो कि कभी मनुष्य अपने विकास के नाम पर इसी प्रकृति को क्षति पहुँचाएगा, और इसीलिए नियम बनाकर नहीं, आस्था बनाकर यह बात समाज में रोप दी गई। आस्था पीढ़ियों तक चलती है, जबकि केवल आदेश के सहारे चली बातें अक्सर कमजोर पड़ जाती हैं।

और तथ्य यह है कि प्रकृति मनुष्य के बिना चल सकती है, मनुष्य प्रकृति के बिना नहीं। वैज्ञानिक आकलनों में पृथ्वी के कुल जैवभार का मनुष्य एक प्रतिशत से भी बहुत छोटा हिस्सा है। इतने छोटे हिस्से का घर के बाकी हिस्सों पर मालिकाना हक जताना विनम्रता नहीं, नासमझी है।

समाधान: लेना है तो लौटाना भी है

यदि वह सोच ही कारण नहीं भी हो, तब भी वह दिशा तो दे ही सकती है। और दुनिया को आज सबसे ज्यादा जरूरत इसी दिशा की है, यानी उपयोग भी, संरक्षण भी।

सौर ऊर्जा इस संतुलन की परीक्षा है, क्योंकि उसकी अपनी चुनौतियाँ हैं। विशाल सोलर पार्क जमीन माँगते हैं, और वह जमीन कहीं चारागाह, कहीं खेत, कहीं जंगल की होती है। पुराने पैनलों का कचरा आने वाले दशक का प्रश्न है। यहीं भारतीय दृष्टि काम आती है। एग्रीवोल्टाइक मॉडल में एक ही कृषि भूमि पर, उपयुक्त व्यवस्था के साथ, खेती और सौर बिजली का उत्पादन साथ-साथ किया जाता है। छतों, तालाबों और नहरों पर लगे पैनल नई जमीन नहीं खाते। समुदाय की भागीदारी से संचालित मिनी-ग्रिड स्थानीय ऊर्जा प्रबंधन को मजबूत कर सकते हैं।

इसके साथ कौशल की बात भी उतनी ही जरूरी है। पैनल लगाना, उनकी देखभाल करना, पुराने उपकरणों को सुरक्षित ढंग से निपटाना, इन सबके लिए स्थानीय युवाओं का प्रशिक्षित होना ही ऊर्जा-परिवर्तन को टिकाऊ बनाता है। तकनीक बाहर से आ सकती है, पर उसे अपना बनाने का हुनर भीतर से उगाना पड़ता है।

सूरज का एक गुण हमारे पुरखों ने बहुत पहले पकड़ लिया था। वह किसी का बिल नहीं भेजता, किसी से भेद नहीं करता, और जितना देता है उसके बदले सिर्फ इतना माँगता है कि हम उसकी रोशनी का सम्मान करें। नई दिल्ली की आगामी असेंबली अगर इसी भाव को नीतियों में उतार सके, तो यह केवल ऊर्जा की नहीं, सभ्यता की दिशा बदलने वाली घटना कहलाएगी।

भारत के पास आज एक अवसर है, और एक कसौटी भी: दुनिया को केवल सस्ते पैनल नहीं, यह भरोसा भी देना कि विकास और प्रकृति आमने-सामने खड़े नहीं हैं। वे एक ही परिवार के दो सदस्य हैं।

साझा मंच, साझा जिम्मेदारी

पढ़ें • लिखें • जुड़ें • आगे बढ़ाएँ

भारतीय ज्ञान समाधान — केवल पत्रिका नहीं, सहभागिता का मंच

भारतीय ज्ञान समाधान का उद्देश्य ज्ञान, संस्कृति, शिक्षा, पर्यावरण, विज्ञान, समाज और समसामयिक विषयों पर सार्थक संवाद को बढ़ावा देना है। यह मंच पाठकों को केवल जानकारी देने के लिए नहीं, बल्कि उन्हें विचार, अनुभव और समाधान साझा करने के लिए जोड़ने का प्रयास है।

आप कैसे जुड़ सकते हैं?

✦ लेख/विश्लेषण भेजें — तथ्यपरक, मौलिक और जनोपयोगी विषयों पर।
✦ स्थानीय प्रेरक पहल साझा करें — शिक्षा, पर्यावरण, कौशल, संस्कृति या सामाजिक नवाचार से जुड़ी।
✦ सुझाव और प्रतिक्रिया दें — पत्रिका को अधिक उपयोगी, पठनीय और विश्वसनीय बनाने के लिए।
✦ संस्थागत सहभागिता — विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय, सामाजिक संस्था एवं विषय-विशेषज्ञ ज्ञान-साझेदारी में जुड़ सकते हैं।

सदस्यता / पाठक सहभागिता

नाम: _____
संस्था/पद: _____
मोबाइल: _____
ई-मेल: _____
शहर/जिला: _____
रुचि क्षेत्र: ☐ शिक्षा ☐ पर्यावरण☐ संस्कृति ☐ विज्ञान/तकनीक ☐ समाज☐ अन्य

"सदस्यता / पाठक सहभागिता" के पास, फॉर्म के ऊपर छोटा बॉक्स लगाएँ। उसमें लिखें:
वार्षिक सदस्यता: ₹240 (12 अंक)
₹20 प्रति प्रति। डाक/कूरियर शुल्क वास्तविक व्यय के अनुसार अतिरिक्त देय होगा।

QR स्कैन कर सदस्यता / लेख / सुझाव का विवरण भरें

सदस्यता संदेश

डॉ. अनुज कुमार नारद

संपादक, भारतीय ज्ञान समाधान

हमारा विश्वास है कि ज्ञान तभी सार्थक है, जब वह समाज तक पहुँचे, संवाद पैदा करे और समाधान की दिशा दिखाए। भारतीय ज्ञान समाधान इसी साझा यात्रा का मंच है—जहाँ पाठक, लेखक, शिक्षक, युवा, विशेषज्ञ और सामाजिक कार्यकर्ता एक-दूसरे के अनुभवों से सीख सकें।

"हम पाठक नहीं, ज्ञान-सहभागी बनें—यही भारतीय ज्ञान समाधान की मूल भावना है।"

संपादकीय नीति

• तथ्य, स्रोत और प्रमाण को प्राथमिकता।
• विचारों की विविधता का सम्मान; भाषा संयत और संवादपरक।
• प्रकाशित सामग्री का संपादन, संक्षेपण अथवा शीर्षक परिवर्तन संपादकीय आवश्यकता के अनुसार किया जा सकता है।
• लेख में व्यक्त विचारों की जिम्मेदारी संबंधित लेखक की होगी।

हमारे प्रमुख विषय

भारतीय ज्ञान एवं संस्कृति	**शिक्षा एवं कौशल**
पर्यावरण एवं जल	**विज्ञान एवं डिजिटल**
समाज एवं समसामयिकी	**नीति एवं जनहित**

प्रकाशन एवं वैधानिक सूचना

"पत्रिका से संबंधित किसी भी दावा, आपत्ति, विवाद अथवा कानूनी कार्यवाही के लिए न्याय क्षेत्र दुर्ग (छत्तीसगढ़) न्यायालय रहेगा।"

मोबाइल: 9111511188 • Print / Digital
www.bhartiyagyansamadhan.in
info@bhartiyagyansamadhan.in



BGS

भारतीय ज्ञान समाधान

शाश्वत ज्ञान, अनंत संभावनाएँ

www.bhartiyagyansamadhan.in

Reg.N. RNI-CTBIL/26/A5037